Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

श्रीसीतापतये नमः

श्रीवाल्मीकिमहामुनिकृतशतकोटिरामचरितान्तर्गतं—

आनन्दरामायणम्

'ज्योत्स्ना'ऽऽह्वया भाषाटीकयाऽऽटीकितम्

जन्मकाण्डम्

प्रथमः सर्गः

(रामका उपवनदर्शन)

श्रीरामदास उवाच

अथ रामः सीतया स साकेते बंधुभिश्चिरम् । क्रीडां चकार विविधां दुर्लभां त्रिदशैरपि ॥ १ ॥
एकदा रघुवीरस्तु सोऽन्तर्वत्नीं विदेहजाम् । ज्ञात्वा धात्रीमुखात्तुष्टो ददौ दानान्यनेकशः ॥ २ ॥
ब्राह्मणान् भोजयामास कोटिशः प्रत्यहं मुदा । चकार नानालंकारान्नवीनान् रत्ननिर्मितान् ॥ ३ ॥
सीतायै दिव्यवासांसि हेमतन्तूद्भवानि च । हरितान्यथ पीतानि रक्तानि चित्रितान्यपि ॥ ४ ॥
कारयित्वाऽथ कुशलैर्जनैः सूक्ष्माणि राघवः । विस्तृतान्यतिदीर्घाणि पुष्पवत्सुलघून्यपि ॥ ५ ॥
महार्घाण्यतिरम्याणि ददौ पत्न्यै मुदान्वितः । अथ मासे द्वितीयेऽह्नि रामो द्विजवरैः सह ॥ ६ ॥
वसिष्ठेन पुंसवनसंस्कारं विधिपूर्वकम् । स चकारोत्सवैर्दिव्यैः सीतायाः परमादरात् ॥ ७ ॥
सुमेधां जनकं चापि समाहूय सविस्तरम् । जनकः परमसंतुष्टः सोऽन्तर्वत्नीं निजां सुताम् ॥ ८ ॥
दृष्ट्वा पुंसवनोत्साहे सीतारामौ प्रपूजयत् । नानालंकारवासांसि हेमतन्तूद्भवानि च ॥ ९ ॥
हरितान्यथ पीतानि सूक्ष्माण्यथ लघूनि च । विस्तीर्णान्यथ दीर्घाणि सीतायै स ददौ मुदा ॥ १० ॥

श्रीरामदास कहने लगे—श्रीरामचन्द्रजी सीता भरतादिक भ्राताओंके साथ चिरकाल तक देवताओंको भी दुर्लभ क्रीड़ाएँ करते रहे ॥ १ ॥ एक दिन रामचन्द्रजीने किसी धायके मुखसे सीताके गर्भिणी होनेका समाचार सुना तो विविध प्रकारका दान दिया ॥ २ ॥ तबसे लेकर प्रतिदिन करोड़ों ब्राह्मणोंको हर्षपूर्वक रामचन्द्रजी भोजन कराते थे। अनेक प्रकारके रत्नोंसे जटिल नवीन अलंकार, सुवर्णके तारोंके कामदार दिव्य वस्त्र और हरे, लाल तथा छींटके कपड़े बनाकर रामने सीताजीको दिये, जो बड़े लम्बे चौड़े और फूलसे हल्के थे ॥ ३-५ ॥ वे वस्त्र बहुमूल्य और सुन्दर थे। जब एक मास व्यतीत हो गया और दूसरे महीनेका दूसरा दिन आया, तब रामचन्द्रजीने गुरु वसिष्ठ तथा बहुतसे ब्राह्मणोंके साथ विधिपूर्वक और सोत्साह सीताका पुंसवनसंस्कार किया ॥ ६ ॥ ७ ॥ उस पुंसवनसंस्कारके उत्सवमें रामचन्द्रजीने सीताके पिता बुद्धिमान् जनकजी तथा माता सुमेधाको भी बुलाया। यह समाचार सुनकर जनकजी बहुत प्रसन्न हुए और सीताको गर्भिणी देखकर पुंसवनसंस्कारके समय ही सीता तथा रामचन्द्रजीकी पूजा की, नाना

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

हस्त्युष्ट्ररथतुरगान् दासीर्दासान्मनोरमान् । शिबिकाश्चापि वासांसि ददौ रामाय सादरम् ॥११॥
एवं संपूज्य श्रीरामं सीतां च जनकः स्त्रियाः । सम्मानितो राघवेण ययौ स्वां मिथिलां पुरीम् ॥१२॥
अथ रामः सीतया स रेमे सन्तुष्टमानसः । गर्भातिभाराक्रांता सा सीता संन्यस्तभूषणा । १३॥
पांडुवर्णानना दीना कृशाऽपि नितरां बभौ । एकदा राघवं धात्र्या सूचयामास जानकी ।।१४॥
ममेच्छाऽऽरामम‌ध्येऽद्य रंतुमस्ति त्वया सह । तथोपवनमध्येऽपि साकेतनगराद्बहिः ॥१५॥
तद्धात्र्यास्यात्प्रियावाक्यं श्रुत्वा चाहूय लक्ष्मणम्। रामोऽब्रवीच्छुभां वाचं मधुरां स्मितपूर्विकाम् ॥१६॥
हे सौमित्रेऽद्य सीताया जाताऽऽरामस्पृहास्ति हि । मया रंतुं ततस्त्वं हि सूचितोऽसि मयाऽधुना ॥१७॥
तथेति रामवाक्यं सोऽप्युररीकृत्य लक्ष्मणः । गत्वा सभायामाहूय त्वरयामास सेवकान् ॥१८॥
चित्रोष्णीषान्वेत्रपाणीन्प्राह वाक्यं स्मिताननः । कथनीयं हट्टमध्ये ह्यारामं याति जानकी ॥१९॥
राघवेण ततो यूयं वणिजस्त्वरयंत्विति । ततः सौमित्रिवचनाच्छ्रुत्वा ते वेत्रपाणयः ॥२०॥
चित्रोष्णीषा रुक्मदण्डा राजमार्गे चतुष्पथे । हट्टे वीथ्यामूर्ध्वहस्तास्तदा प्रोचुर्महास्वरैः ॥२१॥
पौराश्च वणिजः सर्वे तथाऽन्ये व्यवसायिनः । शृण्वंतु हृष्टहृदयाः सीतोद्यानं प्रगच्छति ॥२२॥
राघवेणाभ्यनुज्ञातैर्भवद्भिर्गम्यतां पुरः । एवं सर्वान्निवेद्याथ जग्मुस्ते लक्ष्मणं चराः ॥२३॥
दूतानाज्ञापयामास पुनः सौमित्रिरादरात् । वासोगेहानि चित्राणि ह्यारामेषु समंततः ॥२४॥
कल्पनीयानि वेगेन शोधनीया भुवः शुभाः । जलयंत्राणि सर्वाणि शोधनीयानि सादरम् ॥२५॥
नानामांगल्यवस्तूनि सुगंधीनि महांति च । स्थापनीयानि वै तत्र वस्त्राण्यतिलघूनि च ॥२६॥
एवमादीन्यनेकानि कल्पनीयानि सादरम् । शृंगारणीयाः प्रासादाः सर्वे ह्यारामसंभवाः ॥२७॥
दिव्यवस्त्रैस्तोरणाद्यैर्मुक्तागुच्छैर्विराजिताः । तथेति दूतास्ते सर्वे तथा चक्रुस्त्वरान्विताः ॥२८॥

प्रकारके सुनहले गहने तथा कपड़े जो हरे, पीले, लाल रंगसे रंगे हुए तथा फूलकी तरह हलके थे। उन्हें प्रसन्नतापूर्वक सीताजीको दिया। साथ ही हाथी, घोड़े, रथ, ऊँट, सुन्दर दास-दासी तथा पालकी आदि रामचन्द्रजीको दिया ॥ ८-११ ॥ इस प्रकार राम और सीताकी पूजा करके जनकजी अपनी स्त्रीके साथ मिथिलापुरीको लौट गये ॥ १२ ॥ उधर रामचन्द्रजी प्रसन्नतापूर्वक सीताके साथ विहार करते रहे। गर्भके भारसे लदी तथा समस्त भूषणोंको त्यागे पीले मुख और दुर्बल अङ्गोंवाली भी सीताजी बहुत ही सुन्दर दीखती थीं। एक दिन सीताने किसी धायके द्वारा रामचन्द्रजीके पास यह सन्देश कहला भेजा कि आज आपके साथ बाहरके बगीचेमें घूमनेकी मेरी इच्छा है ॥ १३-१५ ॥ उस धायके मुखसे यह संवाद सुनकर रामचन्द्रने लक्ष्मणको बुलाया और मुस्कराते हुए कहने लगे-हे लक्ष्मण! आज सीता मेरे साथ नगरके बाहरवाले बगीचेमें घूमने जाना चाहती हैं, सो उसका सब प्रबन्ध ठीक कर देना। लक्ष्मणजी 'तथास्तु' कहकर सभामें गये और सेवकोंको बुलाकर जल्दी तैयारी करनेकी आज्ञा दी। रंग-बिरंगी पगड़ी पहने तथा हाथमें बेंतके दण्ड लिये सिपाहियोंसे लक्ष्मणने कहा कि आज रामचन्द्रजी सीताके साथ बगीचे जायँगे। तुमलोग जाकर नगरके व्यापारियोंसे कह दो कि वे लोग जल्दीसे अपनी दूकान बढ़ाकर मार्ग खाली कर दें। इस प्रकार लक्ष्मणकी बातें सुनकर ॥ १६-२० ॥ रंग-बिरंगी पगड़ी पहने तथा सुनहरे डंडे लिये हुए सिपाही चौरास्ते, गली, बाजार और कूंचोंमें हाथ उठाकर जोर-जोरसे कहने लगे--हे पुरवासियों, व्यापारियों तथा व्यवसायियों! आप लोग प्रसन्नतापूर्वक हमारी बात सुनते जायँ। आज सीताजी बगीचेमें जायँगी। इसलिए आप सब पहले ही से वहाँ चलें। इस प्रकार सबको सुनाकर वे दूत लोग फिर अपनी डचोढ़ीपर अर्थात् लक्ष्मणके पास लौट आये ॥ २१-२३ ॥ लक्ष्मणजीने फिर उनको आज्ञा दी कि बगीचेमें तुम लोग जाओ और स्थान स्थानपर नाना प्रकारकी रहनेकी जगहें बनाओ और बगीचेके चारों ओरकी जमीन खूब अच्छी तरह साफ करा दो। जलयंत्रोंकी भी परीक्षा करके उन्हें ठीक कर दो ॥ २४ ॥ २५ ॥ विविध प्रकारकी मांगलिक वस्तुयें और महीन कपड़े आदि लाकर वहाँ रक्खो। जो जो चीजें आवश्यक समझी जायँ, वे सब प्रस्तुत रहें। बगीचेके

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

लक्ष्मणो राघवं गत्वा नत्वा तं प्राह सादरम् । उद्योगसमयोऽद्यैव वर्तते रघुनन्दन ॥२९॥
कुर्यां सिद्धं हि किं यानं सीतायास्तव वा विभो । तत्सौमित्रेर्वचः श्रुत्वा जानकीं राघवोऽब्रवीत् ॥३०॥
सीते यानं वदाद्य त्वं यत्ते मनसि रोचते । तद्रामवचनं श्रुत्वा शिबिकां प्राह जानकी ॥३१॥
रामोऽपि रोचयामास शिबिकामेव वै तदा । तच्छ्रुत्वा लक्ष्मणश्चापि शिबिके रत्नभूषिते ॥३२॥
हेमतन्तूद्भवैर्वस्त्रैः सर्वत्र वेष्टिते शुभे । आनयामास दूतैः सन्मुक्ताजालविराजिते ॥३३॥
आरुरोहाथ श्रीरामः शिबिकां परया मुदा । ततः सीता पांडुरांगो परिमेयविभूषिता ॥३४॥
कृशांगयष्टिर्दासीभिर्दत्तहस्ता ययौ शनैः । शिबिकामारुरोहाथ पृष्ठलग्नोपबर्हणा ॥३५॥
दासीभिर्वीजिता चापि धृतार्थोऽङ्कपबर्हणा । दधार शिबिकामारुरोहाथ पृष्ठलग्नोपबर्हणा ॥३६॥
विगुंफितं च मुक्ताभिः सीता स्वीयकरेण तम् । मुक्ताजालगवाक्षैश्च पश्यन्ती सा मुहुर्मुहुः ॥३७॥
राजमार्गगतान्येव कौतुकानि समन्ततः । ददर्श नृत्यं वेश्यानां सखीभिः परितो वृता ॥३८॥
ततस्ते बान्धवाः सर्वे बन्धुपत्न्यश्च मातरः । शिबिकासूपसंविष्टा दिव्यासु च पृथक् पृथक् ॥३९॥
अग्रे ते भ्रातरः सर्वे ततः सर्वाश्च मातरः । सीताद्याः बन्धुपत्न्यश्च सर्वेषां पुरतो गुरुः ॥४०॥
एवं ते प्रययुः सर्वे पश्यन्तो राघवं मुहुः । ननृतुर्वारनार्यश्च नेदुर्वाद्यान्यनेकशः ॥४१॥
तुष्टुवुर्बंदिनः सर्वे सीतां च रघुनायकम् । एवं नानासमुत्साहैरारामं स ययौ मुदा ॥४२॥
राघवः सीतया युक्तः सैन्यैः सर्वत्र वेष्टितः । विवेश वासोगेहे स ससीतो रघुनन्दनः ॥४३॥
वासोगेहेषु सर्वे ते तस्थुः पौराः समन्ततः । हट्टाः समन्ततश्चासन्ननृतुर्वारयोषितः ॥४४॥
वासोगेहस्य सीताया भित्तयो वस्त्रनिर्मिताः । पञ्चक्रोशमितायामाश्चासन् विस्तारतोऽपि च ॥४५॥
पञ्चक्रोशमितारामे यत्र रेमे विदेहजा । ददर्श जानकी सम्यगाराम नृपसौख्यदम् ॥४६॥

सब भवन अच्छी तरह सजाये जायँ। उनमें कपड़ेकी झालरें, तोरण और मोतियोंके गुच्छे लटकाये जायें। वहाँ पहुँचकर दूतोंने लक्ष्मणजीके आज्ञानुसार सब कुछ तुरन्त ठीक कर दिया ॥ २६–२८ ॥ तब लक्ष्मण रामचन्द्रजीके पास गये और प्रणाम करके सादर कहने लगे—हे रघुनन्दन ! मैंने आपकी आज्ञासे पूरी तैयारी कर दी है। अब क्या आप और सीताजीके लिए सवारी लानेकी भी आज्ञा दे दूँ ? इस प्रकार लक्ष्मणकी वाणी सुनकर रामचन्द्रजीने सीतासे कहा—सीते ! बतलाओ, आज तुम्हें कौन-सी सवारी चाहिए? सीताजीने रामजीकी बात सुनकर पालकी पसन्द की और रामजीने अपने लिए भी पालकी ही माँगी। रामचन्द्रजीकी आज्ञासे लक्ष्मणने रत्नोंसे विभूषित दो पालकियाँ मँगवायीं, जिनपर सुनहले कामके ओहार पड़े थे और चारों ओर मोतियोंके झुब्बे लटक रहे थे ॥ २९–३३ ॥ तब प्रसन्नतापूर्वक रामचन्द्रजी पालकीपर सवार हुए और थोड़ेसे भूषणोंको पहने हुए सीता भी दासियोंके हाथके सहारे शनैः शनैः जाकर पालकीपर बैठीं। उसमें चारों ओर तकियायें लगी हुई थीं। दासियाँ पंखे झलने लगीं। ओहार डाल दिया गया और पालकी चल पड़ी। रास्तेमें सीताजी पालकीके झरोखेसे उन दृश्योंको देखती जाती थीं, जो वहाँपर थे। उसके अनन्तर रामचन्द्रजीके और भाई भी तथा उनकी स्त्रियें और मातायें अलग-अलग दिव्य पालकियोंपर बैठ-बैठकर चलीं। आगे-आगे भाइयोंकी, फिर माताओंकी, फिर सीतादिक पत्नियोंकी और सबसे आगे गुरु वसिष्ठजीकी पालकी चली ॥ ३४–४० ॥ इस प्रकार सब लोग रामचन्द्रजीका दर्शन करते हुए चले जा रहे थे। वेश्यायें नाच रही थीं और नाना प्रकारके बाजे बज रहे थे। बन्दीगण सीता और रामजीकी वन्दना कर रहे थे। इस प्रकार कितने ही तरहके उत्साहोंके साथ वे सब बगीचे पहुँचे। रामचन्द्रजी सीताके साथ-साथ सेनाओंसे घिरे हुए एक तम्बूमें उतरे ॥ ४१–४३ ॥ इसके बाद और लोग भी तम्बुओंमें टिके। साथ ही समस्त नगरवासी लोग भी चारों और तम्बुओंमें ठहर गये। चारों ओर हाट लग गयी और वेश्यायें नाचने लगीं ॥ ४४ ॥ जिस स्थानपर रामचन्द्रजी अपने पुरवासी नागरिकोंके साथ ठहरे थे,

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

रसालयं रसालैस्तैरशोकैः शोकवारणम् । तालैस्तमालैर्हिन्तालैः शालैः सर्वत्र शालितम् ॥४७॥
खपुरैः खपुराकारं श्रीफलैः श्रीफलं किल । गुरुश्रियं त्वगुरुभिः कपिपिंगं कपित्थकैः ॥४८॥
वनश्रियः कुचाकारैर्लकुचैश्च मनोरमम् । सुधाफलसमारंभिरंभाभिः परिभाषितम् ॥४९॥
सुरंगैश्चापि नारङ्गै रङ्गमण्डपवच्छ्रियः । वानीरैश्चापि जम्बीरैर्बीजपूरैः प्रपूरितम् ॥५०॥
मन्दान्दोलितकर्पूरकदलीदलसंज्ञया । विश्रामाय श्रमापन्नानाह्वयंतमिवाध्वगान् ॥५१॥
पुन्नाग इव पुन्नागपल्लवैः करपल्लवैः । कलयन्तमिवालोलैर्मल्लिकास्तबकस्तनम् ॥५२॥
विदीर्णदाडिमैः स्वांतं दर्शयन्ननुरागवत् । माधवीधवरूपेण श्लिष्यंतमिव कानने ॥५३॥
उदुंबरैरवरगैरनंतफलशालिभिः । ब्रह्मांडकोटिबिभ्रन्तमनंतमिव सर्वतः ॥५४॥
पनसैर्वननासाभैः शुकनासैः पलाशकैः । फलाशनाद्विरहिणां पत्रत्यक्तैरिवावृतम् ॥५५॥
कदंबवादिनो नीपान्दृष्ट्वा कंटकितैरिव । समंततो भ्राजमानं कदंबककदंबकैः ॥५६॥
नमेरुभिश्च मेरोश्च शिखरैरिव राजितम् । राजादनैश्च मदनैः सदनैरिव कामिनाम् ॥५७॥
समंततः पटुबटैरुच्चैः पटकुटीकृतम् । कुटजस्तबकैर्भातमधिष्ठितबकैरिव ॥५८॥
करमर्दैः करीरैश्च करजैश्च कदंबकैः । सहस्रकरवद्भातमर्थिप्रत्युद्गतैः करैः ॥५९॥
नीराजितमिवोद्दीपै राजचंपककोरकैः । सपुष्पशाल्मलीभिश्च जितपद्माकरश्रियम् ॥६०॥
क्वचिच्चलदलैरुच्चैः क्वचित्काञ्चनकेतकैः । कृतमालैर्नक्तमालैः शोभमानं क्वचित् क्वचित् ॥६१॥
कर्कन्धुबन्धुजीवैश्च पुत्रजीवैर्विराजितम् । सतिंदुकेङ्गुदीभिश्च करुणैः करुणालयम् ॥६२॥

उसका विस्तार पांच कोसका था। पाँच कोसके लम्बे-चौड़े बगीचेमें जहाँ रामचन्द्रजी ठहरे थे, सीताजी प्रसन्नतापूर्वक विहार करने और उस सुन्दर बगीचेको खूब अच्छी तरह देखने लगीं ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ उसमें रसालके वृक्ष वास्तवमें रसके आलय और अशोकके वृक्ष शोकको दूर करनेवाले थे। ताल, तमाल, हिन्ताल और शालके वृक्ष चारों ओर सुशोभित हो रहे थे ॥ ४७ ॥ खपुरके वृक्षोंसे वह बगीचा खपुर (स्वर्ग) सदृश लग रहा था और श्रीफलसे श्रीफलके सदृश था । अगुरुके वृक्षोंसे गम्भीर शोभावाला तथा कैंथेके वृक्षोंसे कपिल-वर्णका हो रहा था ॥ ४८ ॥ वनलक्ष्मीके कुक्षोंके समान लकुच (बड़हर) के वृक्ष लगे हुए थे। अमृतफलकी नाईं केलेसे वृक्ष लगे हुए थे ॥ ४९ ॥ सुन्दर रङ्गवाले नारङ्गीके वृक्षोंसे रङ्गमण्डपकी शोभा हो रही थी। वानीर, जंबीर, बीजपूर आदिके वृक्ष भी उस बगीचेमें कुछ कम नहीं थे ॥ ५० ॥ धीरे-धीरे वायुके झोंकेसे झूमता हुआ केलेका पत्ता मानों थके हुए बटोहियोंको हाथके संकेतसे विश्राम करनेके लिए बुला रहा था ॥ ५१ ॥ पुन्नागकी तरह पुन्नागके पल्लव करपल्लवके समान थे और मल्लिकाके गुच्छे स्तनके समान दीखते थे ॥ ५२ ॥ अनारके फटे हुए फल मानो अपना हृदय फाड़कर हार्दिक प्रेम प्रदर्शित कर रहे थे। गूलरका खूब लम्बा-चौड़ा वृक्ष था, जिसमें असंख्य फल लगे हुए थे। वह करोड़ों ब्रह्माण्डोंको धारण किये हुए साक्षात् अनन्त भगवान्‌के सदृश मालूम पड़ता था। उपवनकी नाकके समान कटहलके वृक्ष तथा तोतेकी नाकके समान पलाशके वृक्ष लगे हुए थे। कण्टकित पुष्पवाले कदम्बके वृक्षोंको देखकर रोमांच हो जाता था ॥५३-५६॥ नमेरुके वृक्षोंको देखकर सुमेरुशृङ्गकी याद आ जाती थी । राजादनके वृक्ष कामियोंको मदनके भवन सदृश दीखते थे ॥ ५७ ॥ चारों ओर लगे हुए पटुवटके वृक्ष पटकुटीके सदृश दीखते थे । कुटजके गुच्छे बैठे हुए बगुलेके सदृश मालूम पड़ते थे ॥ ५८ ॥ जहाँ तहाँ करौंदे, करीर, कंजे, कदम्ब आदिके बड़ी-बड़ी शाखाओंवाले वृक्ष हजारों हाथ उठाये याचकोंके समान मालूम पड़ते थे ॥ ५९ ॥ राजचम्पक तथा कोरैयाके वृक्ष मानो आरती बनकर उस बगीचेकी आरती उतार रहे थे। फूलोंसे लदे हुए सेमरके वृक्ष कमलवनकी शोभाको भी पराजित कर रहे थे ॥ ६० ॥ कहीं फरफराते हुए पत्तोंवाले केलेके बड़े-बड़े वृक्षोंसे, कहीं सुनहली केतकीके छोटे-छोटे पौधोंसे, कहीं कृतमाल और नक्तमालके वृक्षोंसे वह बगीचा सुशोभित हो रहा था ॥ ६१ ॥ वेर, वंधुजीव तथा पुत्रजीवके वृक्ष लगे थे। तेंदु, इङ्गुदी, करुण आदि वृक्षोंसे वह बगीचा करुणालय हो रहा था । [illegible] हुए [illegible] फूलोंको देखकर मालूम होता

CC0. In Public Domain. Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

गलन्मधूकककुसुमैर्धरारूपधरं हरम् । स्वहस्तमुक्तमुक्ताभिरर्पयंतमिवानिशम् ॥६३॥
सर्जार्जुनाङ्गनैर्वीजैर्व्यजनैर्वीज्यमानवत् । नारिकेलैः सखर्जूरैर्धृतच्छत्रमिवांवरैः ॥६४॥
अमंदैः पिचुमन्दैश्च मंदारैः कोविदारकैः । पाटलातितिणीघोंटाशाखोटैः करहाटकैः ॥६५॥
उद्दंडैश्चापि शेहुंडैर्गुडपुष्पैर्विराजितम् । बकुलैस्तिलकैश्चैव तिलकांकितमस्तकम् ॥६६॥
अक्षैः प्लक्षैः सल्लकीभिर्देवदारुहरिद्रुमैः । सदाफलसदापुष्पवृक्षवल्लिविराजितम् ॥६७॥
एलालवंगमरिचकुलंजनवनावृतम् । जम्ब्वाम्रातकभल्लातशेलुश्रीपर्णिवर्णितम् ॥६८॥
शाकशंखवनं रम्यं चन्दनै रक्तचंदनैः । हरीतकीकर्णिकारधात्रीवनविभूषितम् ॥६९॥
द्राक्षावल्लीनागवल्लीकर्णवल्लीशतावृतम् । मल्लिकायूथिकाकुंदमदयंतीसुगंधितम् ॥७०॥
तुलसीवृक्षषंडैश्च शिक्त्वगस्तिद्रुमैर्युतम् । भ्रमद्भ्रमरमालाभिर्मालतीभिरलंकृतम् ॥७१॥
अलिच्छलागतं कृष्णं गोपी रंतुमनेकशः । सुगंधवातं सुखदं कामसञ्जनकं परम् ॥७२॥
नानामृगगणाकीर्णं नानापक्षिनिनादितम् । नानासरित्सरःस्रोतैः पल्वलैः परितो वृतम् ॥७३॥
उत्सृजंतमिवार्थं वै पतत्पुष्पैरितस्ततः । केकिकेकारवैर्दूरात्कुर्वन्तं स्वागतं किल ॥७४॥
एतादृशं ह्युपवनं जानकी तद्ददर्श सा । तुष्टाऽभूद्दर्शनेनैव विचचार त्वितस्ततः ॥७५॥

इति श्रीशतकोटिरामचरितांतर्गते श्रीमदानन्दरामायणे वाल्मीकीये
जन्मकांडे नाम प्रथमः सर्गः ॥ १ ॥

था कि मानो शिवजी धरणीका रूप धारण किये हुए हैं और अपने ही हाथसे अपनेपर मोतियोंकी वर्षा कर रहे हैं ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ सर्ज, अर्जुन, बीजपूर आदिके वृक्षोंसे ऐसा मालूम होता था कि वे सब वगीचेको पंखा झल रहे हैं। नारियल तथा खजूरके वृक्ष छत्र धारण करनेवाले सेवक जैसे थे। अमंद, पिचुमन्द, मन्दार, कोविदार, पाटल, तितिणी, घोंटा, शाखोट, करहाटक, ऊँचे डण्डेवाले सेहुँड़ और गुड़हलके वृक्ष भी उस बगीचेमें यत्र-तत्र लगे हुए थे। बकुल और तिलकके वृक्ष उस बगीचेके मस्तकपर तिलकके समान मालूम पड़ते थे ॥ ६४–६६ ॥ अक्ष, प्लक्ष, सल्लकी, देवदारु, हरिद्रुम, सदाफल, सदापुष्प और वृक्षवल्ली आदिके वृक्ष भी उस वगीचेमें लगे हुए थे ॥ ६७ ॥ इलायची, लौंग, मरिच तथा कुलंजनके वृक्षोंसे वह समस्त बगीचा भरा हुआ था। जामुन, आम, भल्लातक, श्रीपर्णी आदि वृक्षोंसे उस बगीचेकी रंगीली शोभा देखते ही बनती थी ॥ ६८ ॥ शाक तथा शंखवनके वृक्षोंसे रमणीक एवं चन्दन, हरीतकी, कर्णिकार, आँवला आदिके वृक्षोंसे वह विभूषित था ॥ ६९ ॥ जिनमें सैकड़ों अंगूरकी लताएँ तथा पानकी बेलें लगी हुई थीं। मल्लिका, जूही, कुन्द और मदयन्तीके वृक्षोंसे वह बगीचा सुगन्धित हो रहा था ॥ ७० ॥ उसमें कितने ही तुलसी, सहिंजन तथा अगस्तके वृक्ष लगे हुए थे। जिनपर भौरोंकी श्रेणी चक्कर काट रही थी, ऐसी मालतीके वृक्षोंसे वह अलंकृत था ॥ ७१ ॥ जिस समय मालतीके समीप भौंरा आता था, तब देखनेवालेके हृदयमें यह उत्प्रेक्षा होती थी कि मानों श्रीकृष्ण गोपियोंके साथ विहार करनेके लिए आये हैं ॥ ७२ ॥ उस वगीचेमें बहुतसे मृग चौकड़ियाँ भरा करते थे, विविध प्रकारके पक्षी बोलते रहते थे, कितनी ही नदियों, तालाबों, सोतों तथा गड़होंसे वह बगीचा घिरा हुआ था ॥ ७३ ॥ बगीचेके वृक्षोंसे गिरे हुए फूल किसी दानीकी धनराशिके समान लगते थे। मयूरोंकी आवाजसे ऐसा मालूम पड़ता था कि मानों वह बगीचा अपने यहाँ आनेवालोंका स्वागत कर रहा है ॥ ७४ ॥ इस प्रकारके उस सुन्दर उपवनको सीताने देखा। देखते ही उनका चित्त प्रसन्न हो गया और वे इधर-उधर घूमने लगीं ॥ ७५ ॥ इति श्रीशतकोटिरामचरितांतर्गते श्रीमदानन्दरामायणे वाल्मीकीये जन्मकाण्डे पं० रामतेजपाण्डेयकृत ज्योत्स्ना भाषाटीकायां प्रथमः सर्गः ॥ १ ॥

CC-0. In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

द्वितीयः सर्गः

(रामसीताका उपवनविहार)

श्रीरामदास उवाच

अथ सीता राघवेण रम्योपवनभूमिषु । क्रीडाश्चकार विविधास्त्रिदशैरपि संस्तुताः ॥ १ ॥
कदा वनांतःप्रासादे कदा वस्त्रगृहेष्वपि । कदाऽऽम्रवृक्षच्छायायां कदा पुष्पवनेषु सा ॥ २ ॥
कदा सा जलयंत्राणां समीपस्थवरासने । कदा सरोवरतटे कदा नद्यास्तटेऽपि च ॥ ३ ॥
नौकास्था सरयूतोये सा रामेणाकरोत्कदा । कदा रात्रौ जलक्रीडां सा दिवाऽपि कदा मुदा ॥ ४ ॥
कदा तटाके नौकास्था कदा रंभावनेषु सा । कदा वृक्षोर्ध्वगेहेषु कदोशीरगृहेष्वपि ॥ ५ ॥
कदा सा सरयूनद्यां निर्मितेषु गृहेषु वा । कदा कृत्रिमगेहेषु पुष्पगेहेषु सा कदा ॥ ६ ॥
कदा सा चित्रशालायां पुष्पके वा कदा मुदा । कदा सा केतकीषण्डे कदैकस्तम्भसद्मनि ॥ ७ ॥
कदा नौकोर्ध्वगेहस्था सरय्वाः सैकते कदा । एकस्तंभोर्ध्वगेहेऽपि सखीभिः परिवेष्टिता ॥ ८ ॥
कदा रामेण रहसि कदा दोलकसंस्थिता । पर्यङ्कचक्रमध्यस्था कदा सा दाडिमीवने ॥ ९ ॥
वृक्षसंवद्धपर्यङ्कसंस्थिता राघवेण हि । चकार सा कदा क्रीडां पांडुरांगी पृथूदरी ॥१०॥
हरिद्वस्त्रयुतारक्तकंचुक्या जानकी बभौ । गोपयित्वा निजं देहं सीता वृक्षदलैर्घनैः ॥११॥
चकार व्याकुलं रामं विनोदेन स्मितानना । ज्ञात्वात्मानं राघवेण तुष्टां सम्यग्विविच्य च ॥१२॥
दुद्राव संभ्रमाद्रामं तत्कंठे दोर्लतेऽकरोत् । एवं सीताराघवयोः क्रीडनं परमाद्भुतम् ॥१३॥
विस्तारेणेह को वक्तुं समर्थः पृथिवीतले । एक एव समर्थोऽभूद्वाल्मीकिर्मुनिसत्तमः ॥१४॥
शतकोटिमितं येन चरितं वर्णितं तयोः । सारं सारं मया यस्माद्विविच्य त्वां प्रवर्ण्यते ॥१५॥
वारस्त्रीणां कदा नृत्यं सीताऽऽरामे ददर्श सा । कदा शुश्राव वाद्यानि मञ्जुलानि महांति च ॥१६॥

श्रीरामदासजी कहने लगे—इसके बाद सीता रामचन्द्रजीके साथ उस रमणीक उपवनमें देवताओं द्वारा प्रशंसित विविध प्रकारकी क्रीड़ाएँ करने लगीं ॥ १ ॥ कभी उस बगीचेके बँगलेमें, कभी तम्बूके भीतर, कभी आम्रवृक्षकी छायामें, कभी फूलोंकी झुरमुटमें, कभी फौवारोंके समीप बने हुए किसी एक सुन्दर आसनपर, कभी सरोवरके तटपर और कभी नदीके समीप जाकर विहार करती थीं ॥ २ ॥ ३ ॥ कभी वे नौकापर सवार होकर सरयूकी धारामें रामके साथ विहार करती थीं । कभी रात्रिके समय और कभी दिनमें ही जल-क्रीड़ा करने लग जाती थीं ॥ ४ ॥ कभी सरोवरमें नौकापर, कभी केलेके वनमें, कभी वृक्षके ऊपर बने हुए भवनमें, कभी खसके बने मकानमें, कभी सरयूके भीतर बने हुए भवनोंमें, कभी बनावटी मकानोंमें, कभी फूलघरमें, कभी चित्रशालामें, कभी पुष्पक विमानपर, कभी केतकीके समूह और कभी एक खंभेके ऊपर बने भवनमें रामके साथ विहार करती थीं ॥ ५–७ ॥ कभी नौकाके ऊपर बने बँगलेमें, कभी सरयूकी रेतीमें, कभी अपनी सब सखियोंके साथ एक स्तंभके ऊपर बनी हुई ऊँची अँटारीपर, कभी रामके साथ एकान्तमें, कभी झूलेपर बैठकर, कभी चक्करदार पलङ्गपर, कभी अनारके बगीचेमें और कभी किसी वृक्षके समान पड़े हुए पलङ्गपर गोरे-गोरे अङ्गवाली सीता रामके साथ-साथ क्रीड़ा करती थीं ॥ ८–१० ॥ वे कभी हरे रङ्गके कपड़े तथा लाल कंचुकी पहनकर रामके साथ क्रीड़ा करती हुई वृक्षोंके पत्तोंमें छिपकर रामको व्याकुल कर देतीं और स्वयं छिपी-छिपी मुस्काती रहती थीं । जब वे समझतीं कि रामने देख लिया है तो दौड़ती हुई आतीं और रामके गलेमें गलबँहियाँ डालकर उनके हृदयसे लिपट जाया करतीं । इस प्रकार सीता तथा रामका अद्भुत कौतुक हुआ करता था ॥ ११–१३ ॥ उसे विस्तारपूर्वक कहनेकी सामर्थ्य भला किसीमें है ? हाँ, एकमात्र महर्षि वाल्मीकिजी समर्थ हुए थे । जिन्होंने सौ करोड़ श्लोकोंमें उनके चरित्रोंका वर्णन किया है । उनमेंसे सार-भाग लेकर मैं तुमसे कह रहा हूँ ॥ १४ ॥ १५ ॥ कभी सीताजी उस बगीचेमें वेश्याओंके नृत्य देखती थीं ।

CC0. In Public Domain. Kritikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

कदा चित्रकथा रम्याश्चेन्द्रजालानि वा कदा । कदा वंशारोहणादिकौतुकानि ददर्श सा ॥१७॥
कदा स्तम्भोद्भवं दिव्यं ददर्श कौतुकं महत् । कदा कलानां कौशल्यं सूत्रबन्धैर्विनिर्मितम् ॥१८॥
कदा कृत्रिमहस्त्यादिनानारूपाणि वै पतेः । सीता ददर्श कुशलैर्धृतान्यात्मयुतान्यपि ॥१९॥
एवं सीताऽऽराममध्ये मासमेकं निनाय सा । ययौ रामेण नगरीं नृत्यगीतादिभिः शनैः ॥२०॥
सौधस्थाभिः पुरस्त्रीभिर्वर्षिता कुसुमादिभिः । नीराजिता कुम्भदीपैर्दीपैर्दध्योदनोद्भवैः ॥२१॥
माषतैलसर्षपाद्यैर्नानाबलिभिरादरात् । ययौ निजगृहं सीता राघवेण समन्विता ॥२२॥
एवं नानाकौतुकैश्च नानादोहदपूरणैः । रामस्तां रञ्जयामास साऽपि रामं स्वलीलया ॥२३॥
षष्ठे मासे त्वथ प्राप्ते सीतया राघवो मुदा । सीमन्तोन्नयनं चैव वसिष्ठेन चकार सः ॥२४॥
सुमेधां जनकं चापि समाहूयादरेण हि । ददौ दानान्यनेकानि ब्राह्मणेभ्यो रघूत्तमः ॥२५॥
जनकः पूजयामास रामं स्त्रीबन्धुसंयुतम् । कौसल्यादींश्च साकेतवासिनो वसनादिभिः ॥२६॥
पौराश्च सुहृदः सर्वे भोजनार्थं विदेहजाम् । स्वस्वगेहं पृथङ्निन्युः श्रीरामादिभिरुत्सवैः ॥२७॥
नानावाद्यनिनादैश्च वारस्त्रीनृत्यगायनैः । स्त्रीमुक्तपुष्पवर्षाभिर्नानाकौतुकदर्शनैः ॥२८॥
नानादेशनिवासिन्यः कोटिशस्ता नृपस्त्रियः । समाजग्मुरयोध्यायां सीतां द्रष्टुं मुदान्विताः ॥२९॥
तासां सैन्यैश्च सर्वत्र वेष्टिता नगरी बभौ । ताः सर्वा नृपपत्न्यश्च सीतायाः परमान् वरान् ॥३०॥
दोहदान् पूरयामासुर्दिव्यान्नादिभिरादरात् । ददुर्वस्त्राण्यलंकारान् दिव्यांश्चित्रविचित्रितान् ॥३१॥
स्वस्वदेशोद्भवैर्दिव्यैर्नानावस्तुभिरादरात् । जानकीं पूजयामासुस्ताः सर्वाः पार्थिवस्त्रियः ॥३२॥
स्थित्वा ता मासमेकं तु जग्मुर्देशं निजं निजम् । अथैकदा तु श्रीरामः सुमेधां जनकं तथा ॥३३॥
सीतायाः पुरतः प्राह गुह्यं रहसि हृत्स्थितम् । सीतामदृष्ट्वा सान्निध्ये क्षणाच्च विरहेण ताम् ॥३४॥

कभी मंजुल तथा घनघोर शब्दवाले बाजोंकी धुन सुनती थीं। कभी विविध प्रकारके चित्र देखती थीं, कभी बाजीगरो और बाँसपर चढ़कर नाचनेवालोंके अद्भुत खेल देखा करती थीं ॥ १६ ॥ १७ ॥ कभी स्तम्भके सुन्दर कौतुकों तथा सूत्रबन्धसे बँधी कठपुतलीके नाच एवं कभी बनावटी हाथ आदिके विविध रूपोंको देखा करती थीं ॥१८॥१९॥ इस तरह सीताने उस बगीचेमें एक महीना बिताया। फिर नृत्य-गीतादिक देखती-सुनती हुई रामचन्द्रके साथ अपनी नगरी अयोध्याको लौट आयीं ॥ २० ॥ जब सीता और रामने नगरमें प्रवेश किया, उस समय नगरकी स्त्रियोंने अँटारीपर चढ़कर उन दोनोंपर फूलोंकी वर्षा की, आरती उतारी और दही, भात, उर्द, तेल तथा सरसों आदिके बलि दिये। तब राम सीताके साथ अपने महलको गये ॥ २१ ॥ २२ ॥ इस तरह विविध प्रकारकी क्रीडाओंसे रामने सीताको तथा सीताने रामको आनन्दित किया ॥ २३ ॥ जब गर्भका छठाँ महीना आया, तब रामने अपने कुलगुरु वसिष्ठके द्वारा सीताका सीमन्तोन्नयन-संस्कार कराया ॥ २४ ॥ सुमेधा और जनकके पास निमंत्रण भेजकर उन्हें अपने यहाँ बुलवाया और ब्राह्मणोंको रामने विविध प्रकारके दान दिये ॥ २५ ॥ जनकने आकर सीता तथा अपने सब भाइयोंके साथ बैठे हुए राम और कौसल्यादि माताओंका नाना प्रकारके वस्त्राभूषणों द्वारा सत्कार किया ॥ २६ ॥ अयोध्यावासी नागरिकों तथा मित्रोंने रामचन्द्र और सीताको अपने यहाँ भोजन करनेके लिए बुलाया ॥ २७ ॥ अनेक वाद्योंके साथ-साथ वेश्याओंके नृत्य-गान हुए, स्त्रियोंके हाथसे फूलोंकी वर्षा हुई और कितने ही तरहके खेल-तमाशे हुए ॥ २८ ॥ उस समय सीताको देखनेके लिए अनेक देशोंकी राजरानियाँ अयोध्या आयीं ॥ २९ ॥ उनके साथ आयी हुई सेनासे घिरकर वह अयोध्या नगरी और भी सुन्दर लगने लगी। उन रानियोंने अन्नादि दे-देकर सीताकी इच्छा पूर्ण की और आनन्दपूर्वक बहुतसे वस्त्र-अलंकार तथा अपने देशोंको विशिष्ट वस्तुएँ देकर सीताकी पूजा की ॥ ३०–३२ ॥ वे रानियाँ एक महीना अयोध्यामें रहकर अपने-अपने देशोंको लौट गयीं। एक दिन जब कि सुमेधा, जनक, सीता तथा रामचन्द्र एकान्तमें बैठे थे। तब रामने कहा—हे महाराज ! सीताको अपने पास न देख तथा क्षणभर भी उनसे वियुक्त होकर मैं नहीं रह पाता। जब सीताके पास पहुँच

CC-0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

मयाऽऽगत्य तन्मुखेन्दुसुधया स्वास्थ्यमाप्यते । आत्मानं विह्वलं दृष्ट्वा सीतासान्निध्यमाश्रये ॥३५॥
अधुना जानकीं दृष्ट्वा कामो मेऽतीव बाधते । पञ्चमासोर्ध्वतः संगं गर्हयन्ति मुनीश्वरा ॥३६॥
प्रसूत्यग्रे पञ्चमासैः स्त्री स्वास्थ्यं प्राप्यते पुनः । पञ्चमासैर्विना सङ्गाद्दंपत्योः क्षीणतेरिता ॥३७॥
अत्र किं करणीयं हि वद त्वं श्वशुराद्य माम् । चेत्प्रेषणीया सीतेयं मिथिलां प्रति वै मया ॥३८॥
तर्हि तत्रापि मे गन्तुं भविष्यति समुद्यमः । किंचित्कालं तु सीताया वियोगो येन मे भवेत् ॥३९॥
उपायः स विधातव्यश्चिन्तितोऽस्ति मयाऽपि च । लोकापवादभीत्याऽहं रजकोक्तच्छलादपि ॥४०॥
गङ्गाया दक्षिणे तीरे वाल्मीकेराश्रमे शुभे । त्यजामि जानकीं शुद्धां किञ्चित्कालांतरात्पुनः ॥४१॥
एनां समानयिष्यामि प्रत्ययं मां प्रदास्यति । ततोऽनया चिरं कालं नानाभोगान् भजाम्यहम् ॥४२॥
जनकाद्य त्वया तत्र निजपत्न्या सुमेधया । वाल्मीकेराश्रमे गत्वा स्थेयं वर्षाणि पञ्च वै ॥४३॥
तथेत्यंगीचकाराथ जनकोऽपि सुमेधया । सीताऽप्यंगीचकाराथ विहस्य तद्वचः पतेः ॥४४॥
अथ रामो ददावाज्ञां सस्त्रियं जनकं मुदा । स गत्वा मिथिलाराज्ये स्वीयं सस्थाप्य मंत्रिणम् ॥४५॥
ययौ सुमेधया शीघ्रं वाल्मीकेराश्रमं मुदा । किंचिद्दासीदाससैन्यवाजिवारणवेष्टितः ॥४६॥
नानोपचारान्सीतार्थं संगृह्य शकटादिभिः । चकार गेहं विपुलं वाल्मीकेश्च सुखावहम् ॥४७॥
सर्वसंपत्तिसंयुक्तं बहुगोमहिषीयुतम् । पूरितं धान्यसंघैश्च वस्त्रैराभरणादिभिः ॥४८॥
कासारोपवनारामपुष्पवाटिशतावृतम् । गवाक्षैश्चन्द्रकान्तानां कपाटैश्च समन्वितम् ॥४९॥
कृष्णागुरुसकर्पूरोशीरमाल्यादिमोदितम् । कांचनीश्रृंखलाबद्धरत्नपर्यङ्कमण्डितम् ॥५०॥
हंसपारावतपिककेकीशुकनिनादितम् । मुक्तागुच्छवितानाद्यैः शोभितं चित्रचित्रितम् ॥५१॥

जाता हूँ तो इनके मुखचन्द्रकी सुधासे स्वस्थ हो जाता हूँ । जिस समय मुझमें कुछ भी घबराहट होती है, उस समय मैं सीताके ही समीप रहता हूँ ॥ ३३–३५ ॥ इस समय सीताको देखकर मुझे कामपीड़ा हो रही है और मुनियोंकी सलाह यह है कि गर्भाधान हो जानेपर पांच महीने बाद स्त्रीप्रसङ्ग करना निन्दित है ॥ ३६ ॥ प्रसव हो जानेपर पांच महीने बाद ही स्त्री स्वस्थ होती है। बिना पाँच महीने बीते प्रसङ्ग करनेसे दोनोंकी हानि ही हानि है। ऐसे असमञ्जसके समय मुझे क्या करना चाहिये, सो आप बताइये। यदि मैं सीताको मिथिला भेज देता हूँ तो मुझे भी वहाँ जाना पड़ेगा। किन्तु मैं कुछ दिन तक सीतासे अलग रहना चाहता हूँ। जिस तरह मेरी इच्छा पूर्ण हो, वही इस समय करना चाहिए। मैंने तो यह सोच रक्खा है कि लोकापवादके डरसे अथवा उस धोबीके व्याजसे गङ्गाके दक्षिण तटपर वाल्मीकिके पवित्र आश्रममें कुछ समयके लिए परम शुद्ध जानकीको छोड़ दूँ। थोड़े दिन बाद वापस ले आऊँगा। फिर मैं इनके साथ चिरकालतक नाना प्रकारके भोगोंको भोगूँगा ॥ ३७–४२ ॥ उस समय आपको अपनी सुमेधाके साथ वाल्मीकिके आश्रमपर जाकर पांच वर्ष पर्यन्त निवास करना होगा ॥ ४३ ॥ सुमेधा और जनकने रामकी सलाह स्वीकार की और सीताने भी हँसकर पतिका कहना मान लिया ॥ ४४ ॥ इसके अनन्तर रामने जनकको अपने देश जानेकी आज्ञा दी। वे अपने देश गये और राज्यका सब भार मंत्रीपर छोड़कर अपनी स्त्री सुमेधाके साथ वाल्मीकि ऋषिके आश्रमको चल दिये। चलते समय अपने साथ कुछ दास, दासी, सैनिक तथा हाथी-घोड़े भी ले लिये ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ सीताके लिए बहुत-सी सामग्रियां गाड़ियोंपर लदवाकर साथ ले गये। महर्षि वाल्मीकिके आश्रमको जनकने सब सुखोंका भण्डार बना दिया ॥ ४७ ॥ जनकजीके वहाँ पहुँचनेपर वह आश्रम सब सम्पत्तियों एवं बहुत-सी गौओं और भैंसोंसे भर गया। विविध प्रकारके अन्नों और भाँति-भाँतिके वस्त्राभूषणोंसे वह पूर्ण हो गया ॥ ४८ ॥ आश्रमके पास सैकड़ों पोखरे, उपवन, बगीचे बावली तथा कुएँ तैयार हो गये। चन्द्रकान्त मणिके झरोखों तथा फाटकोंवाले भव्य भवन बने ॥ ४९ ॥ कृष्णागुरु, कपूर, खस तथा विविध प्रकारके सुगन्धित पुष्पोंसे वह आश्रम सुगन्धमय हो गया। जगह-जगह पर सोनेकी जंजीरोंसे सजे रत्नोंके पलङ्ग पड़े हुए थे ॥ ५० ॥ हंस, कबूतर, कोयल, मयूर तथा तोतेके शब्दोंसे

CC-0. In Public Domain. Kirtikant Sharma Nai Garh Delhi Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

एवं मनोहरं गेहं सीतार्थं जनकोऽकरोत् । श्रीः साक्षाद्गंतुमुद्युक्ता यस्मिन्निवसितु चिरम् ॥५२॥
किं दुर्लभं हि तत्राऽस्ति वर्णनीयं मयाऽद्य किम् । यस्या नेत्रकटाक्षेण शक्रादीनां विभूतयः ॥५३॥
वाल्मीकये सर्ववृत्तं जनकोऽपि न्यवेदयत् । मुनिश्चाप्यतिसंतुष्टो मेने स्वतपसः फलम् ॥५४॥

इति श्रीशतकोटिरामचरितांतर्गते श्रीमदानन्दरामायणे वाल्मीकीये जन्मकाण्डे द्वितीयः सर्गः ॥ २ ॥

तृतीयः सर्गः

(राम द्वारा सीताका त्याग)

श्रीरामदास उवाच

अथ रामं तु कौसल्याऽब्रवीद्रहसि संस्थिता । सीतां सीमोल्लंघनार्थं शीघ्रं प्रेषय राघव ॥१॥
तन्मातुर्वचनं श्रुत्वा तथेत्युक्त्वा सविस्तरात् । सलक्ष्मणो निजामबां प्राह यन्मन्त्रितं पुरा ॥२॥
वाल्मीकेराश्रमे सीतात्यागादि च सकारणम् । अथ मासेऽष्टमे प्राप्ते रामो राजीवलोचनः ॥३॥
एकांते जनकीं प्राह वीजितो लक्ष्मणेन हि । कल्पयित्वा मिष देवि रजकोक्तं त्वदाश्रयम् ॥४॥
त्यजामि त्वां वने लोकवादाद्भीत इवापरः । त्रिमासात्पंचमासाद्वा सप्त मासात्सुबुद्धिभिः ॥५॥
अन्तर्वत्नी न गम्येति शास्त्राज्ञां रजकच्छलात् । त्वां त्यक्त्वा पालयिष्यामि निकटे वस्तुमक्षमः ॥६॥
त्वां दृष्ट्वा चंद्रवदनां कामो मेऽतीव बाधते । त्वद्वियोगस्तु निर्बन्धाद्विना मेऽत्र कथं भवेत् ॥७॥
तस्मात्कृतोऽयं निर्बन्धः सत्यं विद्धि मनोरमे । पंचवर्षानतरेण पुनरागत्य मेऽन्तिकम् ॥८॥
लोकानां प्रत्ययार्थं त्वं शपथं हि करिष्यसि । भूमेर्विवरमार्गेण स्थित्वा सिंहासनोपरि ॥९॥

वह आश्रम शब्दायमान हो रहा था। यत्र तत्र मोतियोंको झालरवाली चाँदनियाँ टँगी हुई थीं और बहुत-सी तसबीरें भी जहाँ-तहाँ टँगी थीं ॥ ५१ ॥ जनकजीने सीताके लिए इस प्रकारका सुन्दर भवन बनाकर तैयार करवाया। यदि ऐसा दिव्य भवन सीताजीके वास्ते बन गया तो इसमें आश्चर्य ही क्या है। जहाँ निवास करनेके निमित्त साक्षात् लक्ष्मीजी जानेवाली हों, वहाँ कौन वस्तु दुर्लभ हो सकती है। जिसके कटाक्षमात्रसे इन्द्रादि देवताओंकी भी सम्पत्तियाँ बनती-बिगड़ती हैं। उसके विषयमें मैं कहाँ तक वर्णन करूँगा। जनकजीने महर्षि वाल्मीकिको भी वह सब बातें बतला दीं, जिन्हें सुनकर वे बहुत प्रसन्न हुए और सीताके उस भावी आगमनको उन्होंने अपनी तपस्याका फल समझा ॥ ५२-५४ ॥ इति श्रीशतकोटिरामचरितान्तर्गते श्रीमदानन्दरामायणे पं० रामतेजपाण्डेयविरचित'ज्योत्स्ना'भाषाटीकासमन्विते जन्मकाण्डे द्वितीयः सर्गः ॥ २ ॥

श्रीरामदासने कहा—एक दिन एकान्तमें कौसल्याने रामसे कहा कि अब समय हो गया है। शीघ्र सीताको अपनी सीमासे कहीं अलग भेज दो। माताकी बातको रामने स्वीकार किया और वह भी बतलाया, जिसका निर्णय बहुत दिनों पहले कर चुके थे ॥ १ ॥ २ ॥ फिर यह भी कहा कि मेरा इस समय सीताका त्याग करना उचित है। कुछ दिन बाद आठवाँ महीना लगनेपर रामने सीताको एकान्तमे बुलाकर समझाते हुए कहा—देवि! उस दिन एक धोबीने तुम्हारे विषयमें बड़ी कुत्सित आलोचना की थी। उसीके बहाने मैं तुम्हें कुछ दिनोंके लिए वनमें छोड़ दूँगा। इससे दुनिया समझेगी कि मैं लोकापवादसे बहुत डरता हूँ। दूसरी एक बात यह है कि गर्भसे तीसरे, पाँचवें अथवा सातवें महीनेमें स्त्रीका संसर्ग नहीं करना चाहिए। यह शास्त्रोंकी आज्ञा है। इसलिए उस धोबीकी बातोंके ब्याजसे तुम्हें दूर रखकर मैं शास्त्रीय आज्ञाका पालन करूँगा और पास रहनेमें यह न हो सकेगा कि मैं तुमसे न बोलूँ ॥ ३-६ ॥ क्योंकि तुमको देखनेसे मुझे काम सताने लगता है। तुम्हारा वियोग भी बिना किसी बहानेके नहीं हो सकता था। इसलिए मैंने ऐसा प्रबन्ध किया है और इस समय मैं जो कुछ कह रहा हूँ, उसे अक्षरशः सत्य समझो। पाँच वर्षके भीतर ही तुम फिर यहाँ आओगी और संसारको दिखानेके लिए तुम्हें शपथ लेनी होगी ॥ ७ ॥ ८ ॥ उस

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

यदा गच्छसि पातालं जगत्या पूजिता तदा । भुवं स्तुत्वा भीषयित्वा त्वामंके स्थापयाम्यहम् ॥१०॥
पुत्राभ्यां च मया सीते ततो भोगानवाप्स्यसि । मत्तस्त्वेकः कुशो ज्येष्ठस्तव पुत्रो भविष्यति ॥११॥
मुनेस्तपःप्रभावेण भविष्यत्यपरो लवः । वाल्मीकेराश्रमे चैवं कुमारौ द्वौ भविष्यतः ॥१२॥
अग्रे गत्वा च त्वत्पित्रा त्वद्योग्यं च गृहादिकम् । ससुमेधेन सकलं कृतमस्ति ममाज्ञया ॥१३॥
कुरुष्वाद्य मया यत्त्वामुच्यते जनकात्मजे । सात्त्विकी त्वं यथापूर्वं दंडके गौतमीतटे ॥१४॥
मद्वामांगे स्थिता यद्वन्मे वामांगे वसाधुना । वाल्मीकेराश्रमे गन्तुं गुणद्वयविमिश्रिता ॥१५॥
भूत्वा त्वमाश्रमे स्थित्वा मद्वियोगं प्रदर्शय । तत्रापि त्वां कुशोत्पत्तौ दास्यामि दर्शनं रहः ॥१६॥
तथेति रामवचनाज्जानकी सा स्मितानना । रजस्तमोमयीं स्वीयां छायां निर्माय सादरम् ॥१७॥
श्रीराघवस्य वामांगे सत्त्वरूपा लयं ययौ । ततो रामः सभां गत्वा रात्रौ ज्ञानैकविग्रहः ॥१८॥
मंत्रिभिर्मंत्रतत्त्वज्ञैर्दलमुख्यैर्वयोधिकैः । समततो वेष्टितः संस्तस्थौ सिंहासनोपरि ॥१९॥
तत्रोपविष्टं राजानं सुहृदः पर्युपासिरे । हास्यप्रायकथाभिश्च हासयन्तः स्थिताः प्रभुम् ॥२०॥
कथाप्रसंगात्पप्रच्छ रामो विजयनामकम् । पौरा जानपदा वा मे किं वदन्ति शुभाशुभम् ॥२१॥
सीतां तां मातरं वा मे भ्रातॄन्वा कैकयीमथ । न भेतव्यं त्वया ब्रूहि शापितोऽसि ममोपरि ॥२२॥
इत्युक्तः प्राह विजयो देव सर्वे वदंति ते । कृतं सुदुष्करं कर्म रामेणाविदितात्मना ॥२३॥
तथाप्येवं वदन्ति त्वां जनास्तत्ते वदाम्यहम् । किंतु हत्वा दशग्रीवं सीतामावृत्य राघवः ॥२४॥
अमर्षं पृष्ठतः कृत्वा स्ववेश्म प्रत्यपादयत् । कीदृशं हृदयं तस्य सीतासंभोगजं सुखम् ॥२५॥

समय तुम जब एक दिव्य सिंहासनपर बैठकर भूमिके विवरमार्गसे पातालको जाने लगोगी । तब मैं भूमिकी प्रार्थना करके या धमकाके तुम्हें वापस ले लूँगा और अपनी गोदमें बिठाऊँगा ॥ ९ ॥ १० ॥ उस समय तुम अपने दो बेटोंको लिये हुए मेरे साथ रहकर विविध प्रकारके सुख भोगोगी । मेरे द्वारा तुमसे एक पुत्र होगा, जिसका नाम पड़ेगा कुश और दूसरा वेटा ऋषि वाल्मीकिके प्रभावसे उत्पन्न होगा, जिसका नाम होगा लव । इस प्रकार वाल्मीकिके आश्रमपर तुम्हारे दो पुत्र होंगे ॥ ११ ॥ १२ ॥ तुम्हारी माताके साथ जनकजी पहले ही उस आश्रमपर जा चुके हैं और उन्होंने तुम्हारे आरामकी सब सामग्रियाँ प्रस्तुत कर दी हैं ॥ १३ ॥ आज मैं तुमको जैसा कह रहा हूँ हे जनकात्मजे ! तुम्हें वही करना पड़ेगा । जैसा उस समय गौतमीके तट-पर तुमने अपनी दो मूर्तियाँ बनायी थीं । उसी प्रकार इस समय भी अपना दो स्वरूप बनाओ और पहलेकी नाईं इस समय भी तुम सात्त्विक रूपसे मेरे वाम अंगमें निवास करो ॥ १४ ॥ १५ ॥ और दूसरे स्वरूपसे वाल्मीकिके आश्रमपर रहकर संसारको मेरे वियोगका दुःख दिखलाओ । आश्रमपर भी जब कुशका जन्म होगा, उस समय आकर मैं तुम्हें एकान्तमें दर्शन दूँगा ॥ १६ ॥ रामकी बात सुनकर सीताने मन्द मुस्कराहटके साथ 'तथास्तु' कहा और रजोगुणमयी तथा तमोगुणमयी सीता अपनी छाया रामके दक्षिण भागमें बैठ गयीं और सत्त्वरूपसे रामके वाम भागमें बिलीन हो गयीं ॥ १७ ॥ इसके बाद रामचन्द्रजी सभाभवनमें गये । वहाँ मन्त्रणाकुशल मन्त्रियों तथा कितने ही दरबारियोंसे वेष्टित होकर बैठे । मित्रोंने उस समय भगवान्‌की विविध प्रकारसे पूजा की । तत्पश्चात् तरह-तरहकी हँसी-दिल्लगीकी बातें कर-करके वे परस्पर मनोविनोद करने लगे ॥ १८–२० ॥ प्रसंगवश रामने विजय नामक एक गुप्तचरसे पूछा कि इस समय अयोध्यावासी लोग मुझे किस दृष्टिसे देखते हैं ? उनकी दृष्टिमें मेरा शासन अच्छा है या खराब ? इसके अतिरिक्त सीता, मेरी माताओं, भाइयों अथवा कैकेयीके प्रति लोगोंके हृदयमें कैसा भाव है ? किसी प्रकार डरो मत, जो कुछ मालूम हो साफ-साफ बतला दो । तुम्हें मेरी शपथ है । इस प्रकार रामके पूछनेपर बिजयने कहा—हे देव ! आपके किये महान् कार्योंकी सराहना करते हुए लोग प्रशंसा ही करते हैं ॥ २१–२३ ॥ फिर भी आपके विषयमें कुछ लोगोंकी जो दूसरी राय है । उसे भी बतलाता हूँ । वे कहतेहैं कि रामने रावणको मारकर सीताको उससे छुड़ाया और बिना कुछ सोच-विचारे अपने घरमें बिठाल लिया । हम नहीं समझते कि रामका

CC0. In Public Domain. Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

या हृता विजने पूर्वं रावणेन वने तदा। अकस्मादपि दुष्कर्म योषित्स्वमर्षदं भवेत् ॥२६॥
यादृग्भवति वै राजा तादृश्यो नियताः प्रजाः। इति नानाविधा वाचः प्रवदन्ति पुरौकसः ॥२७॥
अन्यत्किंचित्प्रवक्ष्यामि सांप्रतं रजकोदितम्। दुर्मार्गगां स्वरजकीं भार्यां क्रोधवशेन सः ॥२८॥
रजकः प्राह भो रंडे सोऽहं रामो न मैथिलीम्। रावणस्य गृहे स्पष्टं स्थितामंगीचकार यः ॥२९॥
यथेच्छं गच्छ रंडे त्वं नाहं रामवदाचरे। गच्छता च मया मार्गे रजकेन समीरितम् ॥३०॥
इति राम श्रुतं पूर्वं त्वया पृष्ट निवेदितम्। यत्पश्यसि हितं चात्र तत्कुरुष्व रघूत्तम ॥३१॥
श्रुत्वा तद्वचनं रामः स्वजनान्पर्यपृच्छत। तेऽपि नत्वाऽब्रुवन् राममेवमेतन्न संशयः ॥३२॥
ततो विसृज्य सचिवान्विजयं सुहृदस्तथा। आहूय लक्ष्मणं रामो वचनं चेदमब्रवीत् ॥३३॥
लोकापवादस्तु महान्सीतामाश्रित्य मेऽभवत्। सीतां प्रातः समानीय वाल्मीकेराश्रमांतिके ॥३४॥
त्यक्त्वा शीघ्रं रथेन त्वं पुनरायाहि लक्ष्मण। वक्ष्यसे यदि वा किंचिदत्र मां हतवानसि ॥३५॥
छित्वा सीताभुजं लोकप्रत्ययार्थं समानय। इत्युक्त्वा लक्ष्मणं रामः कैकेयीं द्रष्टुमाययौ ॥३६॥
एतस्मिन्नन्तरे सीतां कैकेयी रहसि स्थिता। पप्रच्छ कौतुकात्सीते भित्तौ लेख्य दशाननम् ॥३७॥
मामत्र दर्शयस्वाद्य तां प्राह जानकी तदा। मयाऽवलोकितो नैव कदाऽपि स दशाननः ॥३८॥
यदा हर्तुं पंचवट्यां मां प्राप्तो गौतमीतटे। तदा दृष्टस्तदंगुष्ठो मया दक्षिणपादजः ॥३९॥
तत्सीतावचनं श्रुत्वा कैकेयी प्राह तां पुनः। यथा दृष्टस्त्वयांगुष्ठस्तथा भित्तौ लिखस्व हि ॥४०॥
तथेति जानकी लेख्य तदंगुष्ठं भयानकम्। कैकेय्यै दर्शयामास तामामंत्र्य गृहं ययौ ॥४१॥

हृदय कैसा है, जो इतना अनर्थ होनेपर भी लौटी हुई सीताके साथ विहार करते हुए सुखी हो रहे हैं ॥२४॥२५॥ जो सीता उस दुष्टके द्वारा हरी गयी और कई वर्ष तक उसके घरमें रही, उसके लिए रामको कुछ सोचने-विचारनेकी आवश्यकता क्योंकर नहीं मालूम हुई। उनका क्या बिगड़ा, वे चाहे एक बार कोई दुष्कर्म भी कर लें तो कोई दृष्टि नहीं उठा सकता, लेकिन इसका कुप्रभाव तो प्रजाके ऊपर पड़ेगा। यह साधारण नियम है कि जिस देशका जैसा राजा होता है, प्रजा भी वैसी ही हुआ करती है। इस प्रकारकी बातें बहुतोंके मुँहसे सुनी गयी हैं। एक धोबीने भी एक बात आपके बारेमें कही थी, सो भी कहता हूँ। उसने क्रोधवश अपनी व्यभिचारिणी स्त्रीको संबोधित करके कहा--अरी ओ रण्डे ! मैं वह राम नहीं हूँ, जिन्होंने वर्षों रावणके घरमें रही हुई सीताको अङ्गीकार कर लिया है। तेरी जहाँ इच्छा हो जा, मैं रामकी तरह कभी नहीं करूँगा और तुझे नहीं रखूँगा ॥२६-३०॥ मैं रास्तेमें चला जा रहा था, तब धोबीकी बात सुनी थी। सो पूछनेपर आपको बतला दी। अब आप जो अच्छा समझें, वह करें। विजयकी बातें सुनकर रामचन्द्रजीने अपने मित्रोंसे भी इस विषयमें पूछ-ताछ की। उन लोगोंने भी वही कहा, जो विजयने बतलाया था। इसके बाद रामचन्द्रजीने मन्त्रियों तथा विजयको विदा कर दिया और लक्ष्मणको बुलाया। लक्ष्मणसे रामने कहा--हे लक्ष्मण ! सीताके कारण संसारमें लोग हमारी बड़ी निन्दा कर रहे हैं। इससे भी बढ़कर अपवाद होनेकी आशंका है। इसलिए कल सबेरे तुम सीताको रथमें बिठाकर मुनि वाल्मीकिके आश्रमपर छोड़ आओ। इस बातके विपरीत यदि तुम कुछ कहोगे तो तुम्हें हमारी हत्या करनेका पाप लगेगा। हाँ, इतना और करना। वनसे लौटते समय सीताकी एक भुजा भी काटकर लेते आना, जिसे दिखाकर मैं अयोध्यावालोंको विश्वास दिला सकूँगा। इतना कहकर राम कैकेयीके पास चल दिये। इसी बीच कैकेयीने आँगनमें बैठी बातें करते-करते सीतासे कहा--सीते ! इस दीवारपर रावणका चित्र लिखकर हमें दिखाओ कि वह कितना बड़ा था। इसके उत्तरमें सीताने कहा--मैंने रावणको कभी देखा ही नहीं ॥ ३१-३८ ॥ हाँ, जब वह पंचवटीमें मुझे हरनेके लिए गया था, तब मैंने उसके दाहिने पैरका अंगूठा देखा था। सीताका उत्तर सुनकर कैकेयीने कहा--अच्छा, उसका अंगूठा जैसा रहा हो, वही इस दीवारपर लिख दो। जानकीने कैकेयीके कथनानुसार दीवारपर उसके भयानक अंगूठेका चित्र लिखकर दिखा दिया और थोड़ी देर बाद अपने

CC0. In Public Domain. Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

अंगुष्ठोपरि कैकेय्या यथायोग्यो दशाननः। लिखितः स्वेन हस्तेन रामं द्रष्टुं कुबुद्धितः ॥४२॥
तावद्रामं समायातं दृष्ट्वा सा संभ्रमान्विता। भित्त्यंतिके राघवाय ददावासनमुत्तमम् ॥४३॥
रामोऽपि नत्वा कैकेयीमासने संस्थितोऽभवत्। ददर्श भित्तौ लिखितं विचित्रं तं दशाननम् ॥४४॥
रामः पप्रच्छ केनात्र लिखितोऽयं दशाननः। कैकेयी कथयामास सीतया लिखितस्त्विति ॥४५॥
यत्र यत्र मनो लग्नं स्मर्यते हृदि तत्सदा। स्त्रियाश्चरित्रं को वेत्ति शिवाद्या मोहिताः स्त्रिया ॥४६॥
कैकेयीवचनं चेत्थं श्रुत्वा रामो महामनाः। सीताश्रयं सभावृत्तं कैकेयीमाह विस्तरात् ॥४७॥
लक्ष्मणेन त्यजाम्यम्ब श्वः सीतां जाह्नवीतटे। सीताभुजं वने छित्त्वा समानयतु मद्गिरा ॥४८॥
सौमित्रिस्त्वां तथा पौरान्दर्शयिष्यति निश्चयात्।
सीतया लिखितो यस्मात्स्वभुजेन दशाननः ॥४९॥
स्त्रीहत्याभयमालक्ष्य तद्वधे लक्ष्मणो मया। न चोदितश्च तां हिंस्रा भक्षयिष्यंति वै क्षणात् ॥५०॥
इति रामवचः श्रुत्वा कैकेयी मुदिताऽभवत्। सीताया विरहाद्रामो नेदं राज्यं प्रशास्यति ॥५१॥
सेवार्थं रामचन्द्रस्य लक्ष्मणोऽपि न शास्यति। तदा श्रीरामवाक्येन भरतो मे प्रशास्यति ॥५२॥
इति संचिन्त्य हृदये कैकेयी मुदिताऽभवत्। रामोऽपि नत्वा कैकेयीं सुमित्रां स्वां च मातरम् ॥५३॥
सभावृत्तं च कैकयीगेहे यज्जातमादरात्। श्रावयामास सकलं वृत्तं सीताश्रयं प्रभुः ॥५४॥
नत्वा सुमित्रां कौसल्यां रामः सीतागृहं ययौ। सीतया दत्तपाद्यार्घासनमंगीचकार सः ॥५५॥
सभावृत्तं च कैकेयीगेहे यद्दृष्टमादरात्। श्रावयामास तत्कृत्स्नं वृत्तं तं जानकीं मुदा ॥५६॥
तच्छ्रुत्वा जनकीं प्राह कैकेय्या वचनान्मया। अंगुष्ठ एव लिखितस्तयोर्ध्वं लिखितो धिया ॥५७॥
अंगुष्ठस्यानुरूपेण दशास्यो दुष्टबुद्धितः। तत्सीतावचनं श्रुत्वा जानकीमाह राघवः ॥५८॥

महलोंको चली गयीं। सीताके चली जानेपर द्वेषवश कैकेयीने रामको दिखानेके लिए उस अंगूठेके अनुसार रावणके पूरे शरीरका चित्र अपने हाथसे बना दिया ॥ ३९-४२ ॥ इतनेमें कैकेयीने देखा कि राम इसी ओर आ रहे हैं। तब झटपट उसने उस दीवारके पास ही रामजीको बैठनेके लिए आसन डाल दिया। रामने वहाँ पहुँचकर कैकेयीको प्रणाम किया। फिर आसनपर बैठ गये। थोड़ी देर बाद रामकी दृष्टि उस बने हुए रावणके चित्रपर पड़ी ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ रामने पूछा—यहांपर रावणका चित्र किसने बनाया है ? उत्तरमें कैकेयीने कहा कि आपकी बहू सीताने यह चित्र लिखा है। जहाँ जिसका मन लगा रहता हे, बार-बार उसीकी याद आती रहती है। यह एक साधारण नियम है। और फिर स्त्रियोंके चरित्रको कौन जान सकता है। शिवादिक देवता भी तो स्त्रीचरित्रका पार नहीं पा सके और वे भी मोहित हो गये ॥४५॥४६॥ कैकेयीकी बातें सुनकर मनस्वी रामचन्द्रजीने कैकेयीको वह बातें भी बतलायीं, जो सभामें विजयके मुँहसे सुनी थीं। इसी सिलसिलेमें उन्होंने यह भी कहा—मातः ! कल सबेरे लक्ष्मणके साथ मैं सीताको गंगाजीके तटपर भेज रहा हूँ। वह उसे वहाँ छोड़ देगा और आप तथा पुरवासियोंको दिखानेके लिए मेरे कहनेसे सीताका एक हाथ भी काट लायेगा। क्योंकि सीताने उसी हाथसे तो रावणका यह चित्र बनाया होगा। स्त्रीहत्याके भयसे मैं उसे मारनेकी आज्ञा नहीं दूँगा। लेकिन जब उसके हाथ नहीं रहेंगे तो वह जियेगी कैसे ? वनके हिंसक जीव ही उसको खा जायँगे ॥४७-५०॥ इस प्रकार रामके वचन सुनकर कैकेयी बहुत प्रसन्न हुई और मनही मन सोचने लगी कि सीताके विरहसे दुखी होकर राम राज्यका काम नहीं कर सकेंगे। लक्ष्मण भी रामकी सेवामें लगे रहनेके कारण राज्यका भार अपने ऊपर नहीं लेंगे। उस दशामें विवश होकर राम मेरे बेटे भरतसे राज्यका काम करनेके लिए आग्रह करेंगे। यह सोचकर कैकेयी प्रसन्न हुई। रामजो भी कैकेयीको प्रणाम करके अपने महलोंको चले गये। वहाँ अपनी माता कौसल्या तथा सुमित्राको आदिसे अंततक सीतासम्बन्धी सब वृत्तान्त कह सुनाया। फिर कौसल्या और सुमित्राको प्रणाम करके वे सीताके भवनमें जा पहुँचे। सीताने पाद्य-अर्घ्य-आचमनीयादिसे उनकी पूजा की और रामजी एक आसनपर बैठ गये। इसके

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

कौटिल्यबुद्धिं कैकेय्याः समग्रां वेद्म्यहं प्रिये । इत्युक्त्वा राघवः सीतामालिंग्यास्यं चुचुंब सः ॥५९॥
सीतया हेमपर्यङ्के भुक्त्वा भोगान्सुपुष्कलान् । विनोदार्थं रघुपतिः प्राह रात्रौ विदेहजाम् ॥६०॥
स्त्रीणां सीते सगर्भाणां वांछितं वांछते मनः । का ते वांछा वदस्व त्वं तत्ते दास्यामि निश्चितम् ॥६१॥
इति रामवचः श्रुत्वा भाविकार्येण यंत्रिता । सा प्राह राघवं रामं नगास्तीरस्थितांस्तरून् ॥६२॥
मुनीनामाश्रमाँश्चापि ऋषिपत्नीश्च तद्वनम् । वांछते मे मनो द्रष्टुं शीघ्रं प्रेषय तत्र माम् ॥६३॥
इति सीतावचः श्रुत्वा तथाऽस्त्विति रघूत्तमः । प्राह सीते लक्ष्मणः श्वो नेष्यति त्वां ममाज्ञया ॥६४॥
पुनः प्राह रघुश्रेष्ठः सीते ते क्रीडनादिभिः । जपध्यानादिकं सर्वं विस्मृतं तन्मया पुरा ॥६५॥
तत्करोम्यधुना सीते गतायां त्वयि काननम् । इत्युक्त्वा जानकीं रामः सुखं सुष्वाप मंचके ॥६६॥
सीताऽपि चिंतयामास यत्र माता पिता मम । किं मां न्यूनं हि तत्रास्ति किंचिद्वस्त्वादिकं सह ॥६७॥
नाहंनेष्यामिश्चस्तूष्णीं सख्या दास्या समन्विता । लक्ष्मणेन रथे स्थित्वा गच्छामि मुदिता सुखम् ॥६८॥
इति निश्चित्य सा रात्रौ सुखं सुष्वाप मंचके । अथ प्रभाते सोत्थाय स्नाता स्नातं रघूत्तमम् ॥६९॥
पक्वान्नादीनि सत्पात्रे पर्यवेषयदुत्तमम् । उपहारे कृते भर्त्रा स्वयं कृत्वोपहारकम् ॥७०॥
पृष्ट्वोर्मिलादिकाः स्त्रीश्च ततः श्वश्रूः प्रणम्य च । गङ्गातीरस्थितान् वृक्षान्मुनीन्द्रष्टुं समुद्यता ॥७१॥
ताः पप्रच्छ सखीयुक्ता दास्या सस्मार लक्ष्मणम् । ततोऽसौ लक्ष्मणो भ्रात्रा चोदितस्तां ययौ जवात् ॥७२॥
दास्या सख्या तुलस्याथ सीतां कृत्वा रथस्थिताम् । ययौ दक्षिणमार्गेण वायुवेगात्स जाह्नवीम् ॥७३॥
इन्द्राद्या निर्जराश्चक्रुः सीतासन्मार्गसत्क्रियाम् । उल्लंघ्य तमसां पुण्यां गोमतीं जाह्नवीमपि ॥७४॥
यमुनां तां महापुण्यां तथा मंदाकिनीं नदीम् । द्वितीयां तमसां पुण्यां समुल्लंघ्य स लक्ष्मणः ॥७५॥

बाद उन्होंने वह वृत्तान्त बतलाया, जो सभामें तथा कैकेयीके भवनमें हुआ था। सीताने कहा कि माता कैकेयीके कहनेसे मैंने केवल रावणके पैरका अंगूठा बनाया था। बाकी उन्होंने अपनी कल्पनासे रावणका सारा शरीर बनाया होगा। इस तरह सीताके वचन सुनकर रामने कहा—प्रिये ! मैं कैकेयीकी कुटिलताको भली-भाँति जानता हूँ। इतना कहकर रामने सीताको अपनी छातीसे लगा लिया और बड़ी देरतक उनका मुँह चूमते रहे। फिर विनोद करते-करते वहीं लेट गये। थोड़ी देर बाद रामने सीतासे कहा—प्रिये ! मैं जहाँतक जानता हूँ, गर्भिणी स्त्रियें कितनी ही चीजें चाहा करती हैं। तुम्हारी भी किसी वस्तुकी इच्छा है ? यदि हो तो बतलाओ, मैं अवश्य दूँगा ॥ ५१–६१ ॥ इस प्रकार रामकी बात सुनकर भावीवश सीताने गङ्गातटनिवासी ऋषियोंके आश्रमों और वनोंको देखनेकी इच्छा प्रकट की और कहा कि मुझे शीघ्र वहाँ भेज दीजिये। राम सीताकी माँग स्वीकार करके कहने लगे—सीते ! कल ही लक्ष्मण तुम्हें गङ्गातटपर ले जायँगे। थोड़ी देर बाद फिर बोले—सीते ! बहुत दिनोंसे तुम्हारे साथ भोग-विलासमें मैं इतना लिप्त हो गया कि जप, तप, ध्यान, धारणा आदि सब कुछ भूल गया था। यदि तुम कुछ दिनके लिए वहाँ चली जाओगी तो मैं कुछ भजन-ध्यान कर लूँगा। इस प्रकार बातें करके राम सो गये। सीता भी अपने मनमें सोचने लगीं कि जहाँपर मेरे पिता-माता आदि परिवारके सब लोग विद्यमान हैं, वहाँ किसी वस्तुकी न्यूनता तो हो नहीं सकती। अतः मैं साथ कुछ न ले जाऊँगी ॥ ६२–६७ ॥ अब कलका दिन मैं वैसे नहीं बीतने दूँगी, बल्कि अपनी सखियों दासियों और लक्ष्मणके साथ हँसी-खुशी वनको अवश्य जाऊँगी । यह निश्चय करके सीता भी आनन्दपूर्वक सो गयीं ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ सबेरे सीताने उठकर स्नान किया और भोजन बनाया। उधर रामने भी स्नान कर लिया और भोजन करने बैठे। सीताने बड़े प्रेमसे परोसकर उन्हें भोजन कराया। तदनन्तर स्वयं भोजन किया ॥ ७० ॥ फिर उर्मिला आदि बहनोंसे पूछकर माताओंको प्रणाम किया और गङ्गातटके वनोंमें रहनेवाले मुनियोंको देखनेके लिए जानेको तैयार हो गयीं ॥७१॥ उन्होंने रथ लानेके लिए लक्ष्मणजीको बुलाया। रामचन्द्रके आज्ञानुसार लक्ष्मण शीघ्र रथ लेकर आ पहुँचे ॥ ७२ ॥ सीता अपनी सखियों, दासियों तथा तुलसीवृक्षके साथ रथमें बैठीं और लक्ष्मणने दक्षिण मार्गसे गङ्गाकी ओर पवनवेगके समान रथको भगाया ॥ ७३ ॥ ७४ ॥

CC-0. In Public Domain. Kirtilal Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

चित्रकूटोपत्यकायां वाल्मीकेराश्रमांतिके । पिप्पलाधो मैथिलीं तां सख्या दास्या वरासने ॥७६॥
निवेश्य नत्वा स प्राह साश्रुनेत्रः सगद्गदः । लोकापवादभीत्या त्वां त्यक्तवान् राघवो वने ॥७७॥
दोषो न कश्चिन्मे मातर्गच्छाश्रमपदं मुनेः ।
इत्युक्त्वा तां परिक्रम्य सख्या दास्याऽपि वीजिताम् ॥७८॥
ययौ रथेन सौमित्रिः पूर्वमार्गेण जाह्नवीम् । शिष्यैः श्रुत्वाऽथ वाल्मीकिर्जनकेन सुमेधसा ॥७९॥
ययौ स्त्रीभिर्द्विजैर्युक्तः पूजयामास जानकीम् । शिबिकायां सन्निवेश्य वीजितां चामरादिभिः ॥८०॥
नानावाद्यनिनादैश्च वेश्यानां नर्तनैर्वरैः । स्तवनैर्मागधादीनां नटादीनां सुगायनैः ॥८१॥
निनाय जनकः सीतां वाल्मीकेराश्रमे मुदा । मुनिपत्न्यो वन्यपुष्पैर्ववर्षुर्जानकीं मुदा ॥८२॥
जानकीशिबिकाग्रे ते दुद्रुवुर्वेत्रपाणयः । एवं विवेश सा सीता वाल्मीकेराश्रमं शनैः ॥८३॥
चक्रुर्नीराजनं दीपैर्मुनिपत्न्यश्च जानकीम् । जानकी हेमपर्यंके धृताधौंकोपबर्हणा ॥८४॥
सुखमापाश्रमे तस्य वाल्मीकेश्च तपस्विनः । जानकीं पूजयामासुर्मुनिपत्न्यः पृथक् पृथक् ॥८५॥
दिव्यान्नैर्वनसंभूतैर्वन्यपुष्पैर्निरन्तरम् । ज्ञात्वा परात्मनो लक्ष्मीं मुनिवाक्येन भक्तितः ॥८६॥
दोहदान् पूरयामासुः सीतयास्ता मुनिस्त्रियः । शिबिकासंस्थिता सीता ददर्श वनकौतुकम् ॥८७॥
यथापूर्वं तु साकेते सुखमाप विदेहजा ।
तथा मुनेराश्रमेऽपि सुखमाप पतिव्रता ॥८८॥

इति श्रीशतकोटिरामचरितांतर्गते श्रीमदानन्दरामायणे वाल्मीकीये जन्मकाण्डे सीताया वाल्मीक्याश्रमगमनं नाम तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥

जब वे परम पवित्र यमुना, मंदाकिनी तथा तमसा नदीको पार करके चित्रकूटकी तलैटीमें वाल्मीकिआश्रमके समीप पहुँचे, तब लक्ष्मणने रथको रोका और एक पीपल वृक्षकी छायामें आसन बिछा दिया। सब सखियोंके साथ सीताजी उसपर जा बैठीं ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ तब आँखोंमें आँसू भरकर गद्गद कण्ठसे लक्ष्मणजी कहने लगे–माता ! लोकापवादके भयसे रामचन्द्रजीने आपको इस वनमें छोड़नेके लिए मुझे आज्ञा दी है। इसमें मेरा कोई दोष नहीं है। अब आप यहाँसे ऋषि वाल्मीकिके आश्रमपर चली जायँ। इतना कहकर लक्ष्मणने सीताकी परिक्रमा की और प्रणाम किया। उस समय दासी और सखियाँ सीतापर पंखा झल रही थी ॥७७॥७८॥ फिर वे अपने रथपर बैठकर उसी मार्गसे अयोध्याके लिए लौट पड़े, जिधरसे गये थे। उधर वाल्मीकिने कुछ शिष्योंसे यह वृतांत सुना तो जनकजी, सुमेधा तथा कितनी ही स्त्रियों और ब्राह्मणोंके साथ वहाँ पहुँचे, जहाँ सीता बैठी थीं। वहाँ पहुँचकर उन्होंने सीताकी पूजा की। फिर उन्हें सुन्दर पालकीमें बिठाया और अपने आश्रमकी ओर चले। रास्तेमें अनेक प्रकारके बाजे बज रहे थे। वेश्यायें नाच रहीं थीं और भाट विरुदावली बखान रहे थे। नट-गायक आदि सुन्दर गायन गा रहे थे ॥ ७९-८१ ॥ जब सीताजी आश्रमपर पहुँच गयीं, उस समय मुनिपत्नियोंने सहर्ष उनपर विविध प्रकारके वनफूल बरसाये ॥ ८२ ॥ उन्होंने आरती उतारी और एक सुवर्णनिर्मित पलंगपर बिठाया ॥ ८३ ॥ वहाँ पहुँचनेपर सीताको बड़ा आनन्द मिला। आश्रमकी ऋषिपत्नियोंने अलग-अलग सीताकी पूजा की ॥ ८४ ॥ उस दिनसे कितने ही तरहके दिव्य अन्न, वनके सुस्वादु फल तथा फूल आदि दे-देकर सीताको सब स्त्रियें प्रसन्न किये रहतीं थीं। क्योंकि उन लोगोंने वाल्मीकिसे सुन रक्खा था कि सीता कोई साधारण स्त्री नहीं, साक्षात् विष्णुभगवानकी भार्या लक्ष्मी हैं। जब इच्छा होती, तब सीता पालकीपर सवार होकर वनोंको देखनेके लिये जाया करती थीं। सीताको जो सुख अयोध्यामें मिलता था, वही वहाँपर भी सुलभ था ॥ ८५-८८ ॥ इति श्रीशतकोटिरामचरितान्तर्गते श्रीमदानन्दरामायणे वाल्मीकीये जन्मकाण्डे पं० रामतेजपाण्डेयविरचितभाषाटीकायां तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥

CC-0. In Public Domain. Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

चतुर्थः सर्गः

(वाल्मीकिके आश्रममें लव-कुशका जन्म)

श्रीरामदास उवाच

अथ गङ्गातटं गत्वा लक्ष्मणोऽचिन्तयद्धृदि । स्वेच्छया कौतुकात्सीतां मया शुद्धां स त्यक्तवान् ॥ १ ॥
स्वीयकामप्रशान्त्यर्थं शास्त्राज्ञां प्रतिपालयन् । एवं सति पुनस्तेन किं ममाज्ञापितं रहः ॥ २ ॥
वनात्सीताभुजं छित्वा नयस्वेत्यतिदुर्घटम् । मयापि शपथं श्रुत्वा न पृष्टः स विचिन्त्य च ॥ ३ ॥
अधुना किं करोम्यत्र कथं रामं प्रगम्यते । सीताभुजं विना दृष्ट्वा रामो मां किं वदिष्यति ॥ ४ ॥
छेत्तुं सीताभुजं शक्तो भविष्यामि कथं त्वहम् । यया९हं पुत्रवन्नित्यं पालितो लालितस्त्वति ॥ ५ ॥
अधुनाऽग्निं विशाम्यत्र रामायास्यं न दर्शये । एवं निश्चित्य सौमित्रिश्चितां कर्तुं मनो दधे ॥ ६ ॥
एतस्मिन्नन्तरे तत्र विश्वकर्मा विधेर्गिरा । कुठारहस्तो विपिने बभ्राम तक्षरूपधृक् ॥ ७ ॥
तं दृष्ट्वा लक्ष्मणः प्राह त्वं मे साहाय्यमाचर । कुठारेण तरूँश्छित्त्वा चितार्थं देहि मां जवात् ॥ ८ ॥
यथेच्छं वसु दास्यामि त्वामहं निश्चयेन हि । सोऽप्याह लक्ष्मणं वीर चिताहेतुं वदस्व माम् ॥ ९ ॥
सौमित्रिः कथयामास पूर्ववृत्तं सविस्तरम् । तच्छ्रुत्वा सकलं तक्षः सौमित्रिं प्राह सस्मितः ॥ १० ॥
अल्पार्थे स्वीयकुणपं मा जुहाव स्वग्राहुज । अह सीताभुजं कृत्वाऽधुना दास्यामि ते क्षणात् ॥ ११ ॥
इत्युक्त्वा लक्ष्मणं कृत्वा जानकीभुजमुत्तमम् । त्वङ्मांसास्थिस्नायुरक्तपूरितं कंचुकीयुतम् ॥ १२ ॥
सीतालङ्कारसहितं तस्याश्चिह्नविचिह्नितम् । ददौ लक्ष्मणहस्ते तं स्वयमंतर्दधे क्षणात् ॥ १३ ॥
सीताभुज समादाय लक्ष्मणोऽपि पुरीं ययौ । गतश्रियं निरुत्साहां वात्यातिधूलिधूसराम् ॥ १४ ॥
ददर्श नगरीं स्वीयां नारीहीनगृहोपमाम् । विवेशाधोमुखः पुर्यं नत्वा सदसि राघवम् ॥ १५ ॥

श्रीरामदास बोले—उधर गङ्गातटके समीप पहुँचकर लक्ष्मणने अपने मनमें सोचा कि यद्यपि लङ्कासे लौटनेपर मैंने ही अग्निमें डालकर सीताको पवित्र किया था। फिर भी रामचन्द्रजीने सीता माताका परित्याग कर दिया है ॥ १ ॥ इसमें दो कारण हैं। एक तो रामचन्द्रजीको अपनी कामवासना कम करनी है, दूसरे शास्त्रकी आज्ञाका पालन करना है। अस्तु, रामके आदेशानुसार मैंने सीताका परित्याग तो कर दिया, किन्तु एक और आज्ञा थी कि "लौटते समय सीताकी एक भुजा भो काटकर लेते आना"। यह बहुत ही कठिन काम है। उस समय रामजीने कसम रखा दिया था, इसलिए विशेष बातचीत भी नहीं कर सका ॥ २ ॥ ३ ॥ अब मैं क्या करूँ ? कैसे प्रभुके पास लौटकर जाऊँ ? यदि वे बिना हाथ लिये मुझे लौटे देखेंगे तो क्या कहेंगे और फिर यदि हाथ काटना चाहूँ तो कैसे काटूँ। जिन्होंने अपने बच्चेके समान मेरा दुलार किया, उन सीताके साथ यह कसाईका काम करनेके लिये मैं क्योंकर आगे बढ़ सकूँगा ॥ ४ ॥ ५ ॥ इसलिए सबसे अच्छा उपाय यह है कि यहीं आगमें जलकर मर जाऊँ। रामको मुँह ही न दिखाऊँ तो अच्छा हो। इस प्रकार विचार करके लक्ष्मणने चिता बनानेका निश्चय किया ॥ ६ ॥ इसी बीचमें ब्रह्माके आज्ञानुसार विश्वकर्मा एक बढ़ईका रूप धारण करके हाथमें कुल्हाड़ी लिये वनमें घूमते फिरते वहाँ आ पहुँचे ॥ ७ ॥ लक्ष्मणने विश्वकर्मासे कहा—कृपया आप अपनी कुल्हाड़ीसे थोड़ीसी लकड़ी काटकर मुझे चिता बनानेको दे दीजिये ॥ ८ ॥ आप जितना धन माँगेंगे, दूँगा। बढ़ईने कहा—हे वीर ! आप अपने लिये चिता बनानेका कारण तो हमें बताइये ॥ ९ ॥ लक्ष्मणने आदिसे अन्ततक सारा वृत्तान्त बता दिया। उसे सुनकर मुस्कराते हुए विश्वकर्माने कहा—॥ १० ॥ इतनी-सी बातके लिये आप अपने इस बहुमूल्य शरीरको आगमें मत जलाइये। मैं अभी क्षणभरमें सीताका हाथ बनाकर आपको देता हूँ ॥ ११ ॥ तदनुसार तनिक ही देरमें विश्वकर्माने सीताका ऐसा हाथ बना दिया, जिसमेंसे रुधिर बह रहा था, माँसके लोथड़े झूल रहे थे और कञ्चुकी पड़ी हुई थी ॥ १२ ॥ सीताके उस हाथमें सब चिह्न विद्यमान थे और अलङ्कार पड़े थे। उस हाथको लक्ष्मणके हाथमें देकर विश्वकर्मा अन्तर्धान हो गये ॥ १३ ॥ तब लक्ष्मण वह भुजा लेकर अयोध्यापुरीको

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

दर्शयामास सीताया भुजं कङ्कणमण्डितम् । तं निरीक्ष्य भुजं रामोऽधोमुखः प्राह लक्ष्मणम् ॥१६॥
कैकेयीं सुहृदः पौरान् सर्वान् जानपदान्नृपान् । सीताभुजो दर्शनीयस्त्वयाऽद्य मम शासनात् ॥१७॥
तथेत्युक्त्वा लक्ष्मणोऽपि स चकार यथोदितः । भुजं संरक्षयामास पेटिकायां निधाय सः ॥
कैकेयी तं भुजं दृष्ट्वा तुतोष नितरां हृदि ॥१८॥
रामोऽपि सीतारहितः परात्मा विज्ञानदृक्केवल आदिदेवः ।
संत्यज्य भोगानखिलान्विरक्तो मुनिव्रतोऽभून्मुनिसेवितांघ्रिः ॥१९॥
अथ सीताऽपि वाल्मीकेर्मुनिपत्नीभिराश्रमे । प्रत्यहं पूजिता वन्यैः सुखं तस्थौ मुदान्विता ॥२०॥
एवं मासद्वयं तत्र नीत्वा सीताऽऽश्रमे मुनेः । सुदिने सुषुवे रात्रौ पुत्ररत्नं रविप्रभम् ॥२१॥
एतस्मिन्नन्तरे रात्रौ ज्ञात्वा तं समयं प्रभुः । राघवः किंकिणीमालाघंटां मुक्त्वाऽथ बंधुना ॥२२॥
पुष्पकस्य ततस्तस्मिन् स्थित्वाकाशपथा ययौ । वाल्मीकेराश्रमे वेगात्सबन्धुस्तं ननाम सः ॥२३॥
ततो वाल्मीकिना विप्रैर्मितैरेव रघूत्तमः । जातकर्मादिसंस्कारांश्चकार विधिपूर्वकम् ॥२४॥
सीतायाः पुरतः पुत्राननमालोकयन्मुदा । ददौ दानान्यनेकानि सवस्त्राभरणान्यपि ॥२५॥
चकार विधिवच्छ्राद्धं पुत्रजन्ममहोत्सवे । देवदुन्दुभयो नेदुर्ववर्षुः पुष्पवृष्टिभिः ॥२६॥
सुराः सीतां शिशुं रामं ननृतुः खे सुरस्त्रियः । नेदुर्जनकवाद्यानि ननृतुर्वारयोषितः ॥२७॥
तुष्टुवुर्मागधाद्याश्च सीतां रामं शिशुं मुहुः । ऋषिपत्न्यः शिशुं सीतां रामं दीपैः सुभूषिताः ॥२८॥
पृथङ्नीराजनं कृत्वा जगुर्गीतं हि सुस्वरम् । वस्त्राद्यैः पूजयामास ताः सर्वा रघुनन्दनः ॥२९॥
सीतारामौ विदेहोऽपि पूजयामास विस्तरात् । वाल्मीकिस्तु कुशैः शांतिं चकार विधिना शिशोः ॥३०॥

ओर चल पड़े । अयोध्यामें घुसते ही लक्ष्मणने देखा कि एक ही दिनमें अयोध्यापुरी सर्वथा श्रीहीन हो गयी है। जहाँ-तहाँ बवंडर उठ रहे हैं और चारों धूल उड़ती दीखती है । यह सब मिलकर उस दिन अयोध्यापुरी ऐसी लग रही थी, जैसे बिना स्त्रीका बिना घर । लक्ष्मण जाते-जाते महलोंमें पहुँचे और रामचन्द्रजीको सीताका हाथ दिखलाया । उस कङ्कण-विमण्डित सीताकी भुजाको देखकर रामने अपना मस्तक झुका लिया और–॥१४–१६॥ इसे ले जाकर माता कैकेयी, मेरे मित्रों, राजाओं एवं पुरवासियों-को दिखला दो, यह मेरी आज्ञा है ॥ १७ ॥ 'तथास्तु' कहकर लक्ष्मणने भी आज्ञाका पालन किया और एक पेटीमें सम्हालकर सीताकी भुजा रख ली ॥ १८ ॥ कैकेयीने सीताकी भुजा देखी तो बहुत प्रसन्न हुई। इधर रामचन्द्रजीने सीतासे वियुक्त होकर सब सांसारिक भोगोंको त्याग दिया और तपस्वियोंके समान अपना जीवन बिताने लगे ॥ १९ ॥ उधर सीताजी भी वाल्मीकिके आश्रमपर वहाँकी मुनिपत्नियोंसे पूजित होती हुई सानन्द जीवन बिताने लगीं ॥ २० ॥ इस तरह दो महीना बीतनेपर सीताने शुभ दिन और शुभ घड़ीमें एक पुत्ररत्नको जन्म दिया ॥ २१ ॥ उसी समय रामचन्द्रको भी यह समाचार मिल गया और रात्रिको अपने पुष्पक विमानपर चढ़कर लक्ष्मणजीके साथ आकाशमार्गसे श्रीवाल्मीकिजीके आश्रमपर जा पहुँचे और लक्ष्मण तथा रामने मुनिको प्रणाम किया ॥ २२ ॥ २३ ॥ इसके अनन्तर वाल्मीकिने आश्रममें उपस्थित थोड़ेसे ब्राह्मणोंके साथ बच्चेका विधिवत् जातकर्मादि संस्कार किया ॥ २४ ॥ सीताके समक्ष राम-चन्द्रने हर्षपूर्वक बेटेका मुख देखा और अनेक प्रकारके वस्त्र-आभरण आदि दान करके ब्राह्मणोंको दिये ॥ २५ ॥ उस पुत्र-जन्मकी प्रसन्नतामें रामने नान्दीमुख-श्राद्धादि किया। देवताओंने प्रसन्न होकर दुन्दुभी बजायी और उनपर फूल बरसाये ॥ २६ ॥ सीता और सीताके पुत्रका मुख देखकर देवाङ्गनायें नाचने लगीं । उधर जनकजीके द्वारा नियुक्त बाजेवाले बाजा बजाने लगे और वेश्यायें नाचने लगीं ॥ २७ ॥ बन्दीजन सीता और रामकी स्तुति करने लगे । ऋषिपत्नियोंने सुन्दर थालमें घृतका दीपक जलाकर राम, सीता तथा नवजात शिशुकी आरती उतारी और विविध प्रकारके मङ्गलगान गाये । रामने अनेक तरहके वस्त्र।भूषणोंसे उनका सत्कार किया ॥ २८ ॥ २९ ॥ महाराज जनकने भी राम और सीताकी विधिवत् पूजन किया और वाल्मीकिने

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

शांत्यर्थं प्रोक्षितो यस्मात्कुशैस्तस्मात्कुशाह्वयः। वाल्मीकिना राघवाग्रे निश्चितो बालकस्य हि ॥३१॥
एवं नानासमुत्साहैर्नीत्वा तत्र निशां सुखम्। तत्रस्थान् सकलानाह ममात्रागमनस्य हि ॥३२॥
यस्माद्वार्ता बहिर्गच्छेदाश्रमादस्य वै मुनेः। स मे दण्ड्यो भवेदेव शत्रुरूपो न संशयः ॥३३॥
इत्युक्त्वा सकलान्दृष्ट्वा मुनीन्नत्वा पुनः पुनः। सीतामामंत्र्य श्रीरामो यानं भ्रात्राऽऽरुरोह सः ॥३४॥
विहायसा क्षणात्प्राप साकेतं रघुनन्दनः। अवरुह्य विमानात्स पूर्ववन्निद्रितो गृहे ॥३५॥
अथ रामो वाजिमेधशतं कर्तुं मनो दधे। कृत्वा स्वर्णमयीं सीतां वस्त्रालंकारभूषिताम् ॥३६॥
पापिनीं मलिनां दुष्टां भर्तुर्निंदापरायणाम्। भर्तृविद्वेषिणीं क्रूरां चौरकर्मणि तत्पराम् ॥३७॥
भर्तारं घातुमिच्छन्तीं सदा कलहकारिणीम्। परभुक्तां पापरतां भर्तुर्वाक्यविलोपिनीम् ॥३८॥
स्वीयेच्छावर्तिनीं नष्टां मृतां नीतां गतां स्त्रियम्। त्यक्त्वा कुशमयीं विप्रैः कार्या पत्नी स्वकर्मसु ॥३९॥
हैमी कार्या बाहुजैश्च वैश्यैः कार्या तु राजती। शूद्रैः कार्या ताम्रमयी स्वस्वकर्मप्रसिद्धये ॥४०॥
अथवा सर्ववर्णैश्च कार्या पत्नी तु कांचनी। रामोऽपि कृत्वा सौवर्णिमग्निहोत्रं चकार सः ॥४१॥
रावणेन यदा नीता सीता सा दंडके तदा। हेम्नोऽभावात्कुशमयी कृता रामेण जानकी ॥४२॥
अन्ये कुशमयीं पत्नीं विधाय गृहमेधिनः। अग्निहोत्रमुपासन्ते नित्यत्यागोऽतिगर्हितः ॥४३॥
व्यभिचारवती पापा भर्तृविद्वेषिणी तथा। आधाने सा परित्याज्या न वा त्याज्या मतांतरात् ॥४४॥
पक्षे पक्षे नवम्यां हि स्नानं ह्यवभृथाभिधम्। कर्तुं निश्चितवान् रामस्तदा विप्रैः पुरोधसा ॥४५॥
भागीरथ्युत्तरे तीरे यज्ञभूमिं चकार सः। आप्रयागान्मुद्गलस्याश्रमो यावच्च दक्षिणे ॥४६॥

विधिपूर्वक कुशासे अभिषेक करते हुए शान्ति-पाठ किया ॥ ३० ॥ शान्तिके निमित्त वाल्मीकिने कुशासे शांति की थी। इसीलिए उन्होंने रामके सामने ही उस बच्चेका नाम कुश रक्खा ॥ ३१ ॥ इस तरह नाना प्रकारके उत्सवोंमें वह रात वहाँ बितायी और पिछली रातको रामने आश्रमके लोगोंसे कहाँ कि जो कोई मनुष्य मेरे यहाँ आनेका समाचार किसीसे कहेगा, वह मेरा शत्रु होगा और मैं उसको दंड दिये बिना न रहूँगा ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ऐसा कहकर रामने अयोध्या वापस आनेके लिए लोगोंसे आज्ञा माँगी और मुनियोंको प्रणाम किया। फिर सीतासे पूछकर रामचन्द्रजी लक्ष्मणके साथ विमानपर आरूढ़ हुए और थोड़ी देरमें अयोध्या आकर नित्यकी तरह अपनी शय्यापर सो गये ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ कुछ दिन बीतनेके बाद रामने सौ अश्वमेध यज्ञ करनेका विचार किया। उस समय सीता तो थीं नहीं। इसलिए रामने सुवर्णकी सीता बनाकर यज्ञ करना निश्चित किया। क्योंकि शास्त्रमें लिखा है कि पापिन, मैली-कुचैली, दुष्ट स्वभावकी, निन्दा करनेवाली, पतिसे लड़ाई करनेवाली, क्रूर प्रकृतिकी, चोट्टिन, स्वामीको मारनेकी इच्छा रखनेवाली, सदा लड़ाई करनेवाली, कुलटा, स्वामीकी आज्ञाके प्रतिकूल चलनेवाली और स्वेच्छाचारिणी स्त्री यदि खो जाय, मर जाय या किसीके द्वारा भगा ली जाय अथवा स्वयं भाग जाय तो उसको त्यागकर ब्राह्मण कुशकी, क्षत्रिय सुवर्णकी, वैश्य चाँदीको और शूद्र ताम्रकी स्त्री बनाकर यज्ञादि कर्म करे ॥ ३६-४० ॥ अथवा सामर्थ्य होनेपर सब जातिके लोग सुवर्णकी नारी बनाकर अपना काम चलायें। इन्हीं शास्त्रीय आज्ञाओंसे रामने सुवर्णकी सीता बनाकर अपना यज्ञ प्रारम्भ किया ॥ ४१ ॥ पहले जब दण्डक वनमें सीता हर ली गयी थीं और रामको रामेश्वर-स्थापनाके समय सीताकी आवश्यकता पड़ी थी, तब उन्होंने सुवर्णके अभावमें कुशकी ही सीता बनाकर रामेश्वरकी स्थापना की थी ॥ ४२ ॥ कुछ गृहस्थ नारीके अभावमें कुशकी स्त्री बनाकर अग्निहोत्र करते हैं, वह भी ठीक है। कहनेका मतलब यह कि स्त्रीके अभावमें किसी प्रकारकी स्त्री अवश्य बना लेनी चाहिए। क्योंकि स्त्रीके बिना कोई भी याज्ञिक कार्य सम्पन्न नहीं होता। कुछ आचार्योंका मत है कि—"व्यभिचारिणी, पापिनी तथा स्वामीसे द्रोह करनेवाली स्त्रीका सदाके लिए परित्याग कर देना चाहिए" कुछका यह मत है कि "परित्याग न भी करे तो कोई हानि नहीं।" ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ रामने प्रत्येक नवमीको एक अश्वमेध यज्ञ पूर्ण करनेका निश्चय किया और भागीरथीके उत्तरी तटपर यज्ञशाला बनानेकी बात

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection / Kantikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

जाह्नव्युत्तरतस्तावच्चकार स्वर्णलांगलैः । यस्याश्रमस्य सान्निध्ये भागीरथ्यस्त्युदग्वहा ॥४७॥
रुक्ममय्याऽथ जानक्या यज्ञारंभं चकार सः । अज्ञानदृग्भ्यो द्रष्टुं वै चकार स्वर्णनिर्मिताम् ॥४८॥
वामांगस्थां गुप्तरूपां ज्ञानदृग्भ्यश्च सात्त्विकीम् । बिभ्रत्सदैव श्रीरामो जानकीं लोकमातरम् ॥४९॥
यज्ञान्ते स्वर्णजां सीतां ददौ स्वगुरवे प्रभुः । एवं यज्ञशतेऽत्र गुरवे शतमूर्तयः ॥५०॥
याः समर्पिता रामेण तासां दानफलेन हि । षोडशस्त्रीसहस्रेभ्यश्चोर्ध्वं स्त्रीणां शत पुनः ॥५१॥
द्वारकायां कृष्णरूपो विवाहेनोद्वहिष्यति । प्रतियज्ञे श्यामकर्णमश्वं रामो मुमोच ह ॥५२॥
चतुर्दिनाच्चतुर्दिक्षु परिक्रम्य ययौ हयः । एवं सर्वेषु यागेषु ययौ वाजी पृथग्जवात् ॥५३॥
पुष्पकस्थः स शत्रुघ्नो हयरक्षां चकार वै । एवं सदा यज्ञवाटे विरेजे दीक्षया विभुः ॥५४॥
एवं च नवतिसंख्या रामेण नव वै कृताः । चरमस्यापि प्रारम्भं रामो यज्ञस्य सोऽकरोत् ॥५५॥
गंगाया दक्षिणे तीरे मुद्गलस्याश्रमोऽस्ति हि । तत्र तस्यान्तिके गंगोदक्तीरे च उदग्वहे ॥५६॥
दिनानि दश वाल्मीकिर्निशायां संध्ययोरपि । श्रीरामरक्षया चक्रे बालकस्याभिमंत्रणम् ॥५७॥
कुशं नाम तदा चक्रे मुनिरेकादशे दिने । चकार सर्वसंस्कारान् मुनिः श्रीराघवाज्ञया ॥५८॥
एवं स बालकस्तत्र ववृधे मातृलालितः । जनकश्च सुमेधा च नानावस्त्रैः सुशोभनैः ॥५९॥
शोभयामास दौहित्रं नानाव्याघ्रनखादिभिः । बालोऽपि रंजयामास स्वक्रीडाभिर्विदेहजाम् ॥६०॥
एकदा निद्रितं प्रेंखे दृष्ट्वा बालं मुनेः पुरः । अन्यकर्मणि व्यग्रा च सखीं स्वीयां स्वमातरम् ॥६१॥
जनकं चापि सा सीता दृष्ट्वा सर्वान्बहिर्गतान् । आश्विने रविवारे च नद्यां स्नातुं समुद्यता ॥६२॥
मुनिं तं बालरक्षायां कृत्वाऽथ तमसां ययौ । दास्या मार्गेण गच्छंती ददर्श पथि वानरीम् ॥६३॥
कटिस्कंधमस्तकेषु बिभ्रतीं पंच बालकान् । तां दृष्ट्वा स्वशिशुं स्मृत्वाऽचिंतयज्जानकी हृदि ॥६४॥

ठहरायी गयी । प्रयागसे लेकर मुद्गल मुनिके आश्रमपर्यन्त जितना स्थान था, वह सुवर्णके हलसे जोता गया। रामकी उस यज्ञशालाके पास गंगाजी ठीक उत्तरकी ओर बह रही थीं ॥ ४५–४७ ॥ इसके अनन्तर रामने सुवर्णमयी सीताके साथ यज्ञकार्य प्रारम्भ किया । वह सुवर्णकी सीता अज्ञानी लोगोंको देखनेके लिए रखी गयी थी, किन्तु अज्ञानियोंकी दृष्टिमें तो सात्त्विकी जानकी सदा रामके वामभागमें निवास करती थीं ॥४८॥४९॥ प्रत्येक यज्ञके समाप्त हो जानेपर राम वह स्वर्णमयी सीता अपने गुरु वसिष्ठको दान दे दिया करते थे । इस प्रकार प्रत्येक यज्ञकी पूर्णतापर स्वर्णमयी सीता देते-देते रामने सौ सीताओंका दान किया । उस दानके फल-स्वरूप आगे कृष्णावतारमें उनको सोलह हजार एक सौ स्त्रियाँ मिलीं । प्रत्येक यज्ञमें राम अपना श्यामकर्ण घोड़ा दिग्विजयके लिए छोड़ते थे । वह चार दिनमें चारों ओर घूमकर लौट आया करता था । साथमें शत्रुघ्न पुष्पक विमानपर बैठकर घोड़ेकी रक्षाके लिए जाया करते थे और रामचन्द्रजी दीक्षा लेकर यज्ञशालामें बैठे रहते थे ॥ ५०–५४ ॥ इस प्रकार रामचन्द्रजीने निन्नानबे यज्ञ पूर्ण किया और अन्तिम सौवाँ यज्ञ भी प्रारम्भ कर दिया ॥ ५५ ॥ गंगाके दक्षिण तटपर मुद्गल नामके एक ऋषिका आश्रम था और उत्तरवाहिनी गंगाके तटपर ही वाल्मीकि संध्याके समय रामके पुत्र कुशका रामरक्षा-मंत्रसे अभिषेक कर रहे थे ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ग्यारहवें दिन वाल्मीकिने बच्चेका नामकरण करके रामके आज्ञानुसार सब संस्कार किया ॥ ५८ ॥ बच्चा भी बड़े लाड़-प्यारके साथ समय बिताता हुआ बढ़ने लगा । जनक और सुमेधा अनेक प्रकारके सुन्दर वस्त्रों और व्याघ्रनख आदि तरह-तरहके अलंकारोंसे अलंकृत करके रखते थे । बच्चा अपने कौतुकोंसे जानकीजीको प्रसन्न किया करता था । एक दिन कुश वाल्मीकिके पास पालनेपर सो गया । सखियाँ अन्य कामोंमें व्यस्त थीं । सीताके माता-पिता कहीं घूमने चले गये थे । उस रोज आश्विन मासके रविवारका दिन था। इसलिए सीताने नदीमें स्नान करनेकी इच्छा की । सीताने वाल्मीकिजीसे बच्चेको देखने रहनेके लिए कह दिया और स्वयं एक दासीको साथ लेकर तमसाकी ओर चल पड़ीं । रास्तेमें सीताने देखा कि एक वानरी अपने पांच बच्चोंको कमर और मस्तकपर बैठाये चली जा रही है। उसे

CC0. In Public Domain. Anikant Sharma Najafgarh Delhi Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

तिर्यग्योनौ जन्मवत्या वानर्या बालकानहो । स्नेहात्सहैव नीयन्ते धिङ्मां मानवदेहजाम् ॥६५॥
एकं चापि निजं बालं त्यक्त्वा गेहेऽद्य गम्यते । मया विमूढया स्नातुं शुच्यत्र क्षणिकं सुखम् ॥६६॥
इति धिक्कृत्य चात्मानं परिवृत्याश्रमं ययौ । एतस्मिन्नन्तरे गेहे वाल्मीकिर्मुनिपुंगवः ॥६७॥
गतः स लघुशंकार्थं कार्यार्थं बटवो गताः । गृहीत्वा सा कुशं प्रेंखाद्ययौ सीता बहिः पुनः ॥६८॥
दास्या सह नदीं गत्वोषसि स्नानं चकार वै । अदृष्ट्वाऽथ मुनिर्बालं दार्घं निःश्वस्य वै मुहुः ॥६९॥
सीताशापभयाच्चक्रे लवैर्बालं स पूर्ववत् । तपोबलेन तं प्रोक्ष्य जीवयामास वेगतः ॥७०॥
ज्ञानदृष्ट्या तीव्रतया मुनिना नावलोकितम् । ततः सीताऽपि सुस्नाता दास्या गेहं शनैर्ययौ ॥७१॥
कटौ गृहीत्वा तं बालं रुक्मनू पुरनिःस्वना । प्रेंखेऽन्यं बालकं दृष्ट्वा मुनिं पप्रच्छ जानकी ॥७२॥
प्रेंखे कस्याः शिशुश्चायं सोऽपि दृष्ट्वा तदा कुशम् । कटिप्रदेशे जानक्या विस्मयं परमं गतः ॥७३॥
नमस्कृत्य ततः सीतां सर्वं वृत्तं न्यवेदयत् । अंके निधाय तं बालं सीताया ह्यब्रवीन्मुनिः ॥७४॥
प्रसादान्मम वैदेहि द्वितीयोऽयं सुतस्तव । भवत्वद्य लवो नाम्ना लवैर्यस्माद्विनिर्मितः ॥७५॥
वाल्मीकेर्वचनात्साऽपि शिशुं जग्राह जानकी । मुनिस्तयोर्नाम चक्रे कुशो ज्येष्ठोऽनुजो लवः ॥७६॥
जातकर्मादिसंस्कारान् लवस्यापि चकार सः । तदा निनेदुर्वाद्यानि भूम्यां खेऽपि दिवौकसाम् ॥७७॥
ववर्षुजानकीं बालौ वाल्मीकिं कुसुमैः सुराः । चकार जनकश्चापि सुमेधा परमोत्सवान् ॥७८॥
क्रमेण विद्यासंपन्नो सीतापुत्रौ विरेजतुः । धनुर्विद्यामस्त्रविद्यां शिक्षयामास तौ मुनिः ॥७९॥
कृत्स्नं रामायणं स्त्रीयं कृतं तौ शिक्षयन्मुदा । यस्मिन्नानन्दरम्यं च चरित्रं राघवस्य हि ॥८०॥
कुमारौ स्वरसंपन्नौ सुन्दरावश्विनाविव । तन्त्रीलयसमायुक्तौ गायंतौ चेरतुर्वने ॥८१॥
तत्र तत्र मुनीनां तु समाजेषु सुरूपिणौ । गायन्तावपि तौ दृष्ट्वा विस्मिता मुनयोऽब्रुवन् ॥८२॥

देखकर उन्होंने अपने मनमें सोचा कि तिर्यग्योनिकी स्त्री होकर भी यह वानरी कितने प्रेमसे बच्चोंको अपने साथ रखती है। मुझ मानवजातिकी भामिनीको धिक्कार है, जो अपने एक लड़केको आश्रमपर छोड़कर तमसा स्नान करने जा रही हूँ ॥ ५९-६५ ॥ इस तरह अपनेको धिक्कारकर सीता वहाँसे फिर आश्रमको लौट पड़ीं। इसी बीच वाल्मीकिजी लघुशङ्का करनेके लिये बाहर चले गये थे। विद्यार्थी भी अपने-अपने कामसे पहले ही चले जा चुके थे। इतनेमें सीता पहुँचीं। उन्होंमें कुशको उठा लिया और दासीके साथ तमसाकी ओर चली गयीं ॥ ६६ ॥ ६७॥ उधर वाल्मीकि लौटकर आये तो उनकी निगाह पालनेपर पड़ी। उसपर बच्चेको नहीं देखा। ऐसी अवस्थामें मुनिराजने एक लम्बी साँस ली और सीताके शापके भयसे अपने तपोबल द्वारा लवसे कुशके समान ही एक बालक और बना दिया ॥६८-७०॥ घबराहटके कारण उन्होंने अपनी ज्ञानदृष्टिसे यह नहीं देखा कि सीता कुशको अपने साथ ले गयी है। कुछ देर बाद स्नान करके सीता भी दासीके साथ धीरे-धीरेसे कुटियामें आयीं ॥ ७१ ॥ वहाँ उन्होंने देखा कि कुशके समान ही अलंकारादिसे विभूषित एक बालक पालनेपर पड़ा सो रहा है। यह देखकर सीताने ऋषिसे पूछा कि यह किसका बच्चा है ? उधर ऋषिने देखा कि कुश तो सीताकी कमरपर है, तब उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ ॥७२॥७३॥ फिर उन्हें नमस्कार करके वाल्मीकिने वह वृत्तांत बतलाया, जिसके कारण उन्हें दूसरा बच्चा बनाना पड़ा था। उसके पश्चात् मुनिने चुमकारकर लवको सीताकी गोदमें दे दिया और कहा—॥७४॥ देवि ! इसे भी सम्हालो। तब सीताने उस बच्चेको भी अंगीकार किया। मुनिने कहा–इन दोनोंमें ज्येष्ठ कुश होगा और कनिष्ठ (छोटा) लव ॥७५॥ इसके अनन्तर उन्होंने लवका भी जातकर्म आदि संस्कार किया। उस समय विविध प्रकारके बाजे बजे। स्वर्गमें देवताओंने भी मंगलवाद्य बजाकर जानकी, शिशु तथा वाल्मीकिके ऊपर फूलोंकी वर्षा की। सुमेधा तथा जनकने विविध उत्सव किये। क्रमशः दोनों पुत्र बड़े हुए। उन्होंने अनेक विद्याओंका अध्ययन किया और महर्षि वाल्मीकिने उनको धनुर्विद्या तथा अस्त्रविद्या भी सिखायी ॥ ७६-७९ ॥ फिर अपनी बनायी सम्पूर्ण रामायणकी भी उन्हें शिक्षा दी। जिसमें रामचन्द्रजीका आनन्ददायक चरित्र वर्णित था ॥ ८० ॥ अश्विनीकुमारकी भाँति सुन्दर वे दोनों बालक मधुर स्वरसे

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

गन्धर्वेष्विह किन्नरेषु भुवि वा देवेषु देवालये
पातालेष्वथ वा चतुर्मुखगृहे लोकेषु सर्वेषु च ।
अस्माभिश्चिरजीविभिश्चिरतरं दृष्ट्वा दिशः सर्वतो
नाज्ञायीदृशगीतवाद्यगरिमा नादर्शि नाश्रावि च ॥८३॥

एवं स्तुवद्भिरखिलैर्मुनिभिः प्रतिवासरम् । आसते सुखमेकांते वाल्मीकेराश्रमे चिरम् ॥८४॥
रुक्मकंकणमञ्जीरनूपुरैस्तौ विभूषितौ । केयूररशनाहारकुंडलैरतिशोभितौ ॥८५॥
निजक्रीडाकौतुकैश्च बालवाक्यैर्मनोहरैः । सीतां सुमेधां जनकं रञ्जयामासतुर्मुनिम् ॥८६॥

इति श्रीशतकोटिरामचरितांतर्गते श्रीमदानन्दरामायणे वाल्मीकीये विलासकाण्डे कुशलवजन्मकथनं नाम चतुर्थः सर्गः ॥४॥

पञ्चमः सर्गः

(रामरक्षा-महामंत्र)

विष्णुदास उवाच

श्रीरामरक्षया प्रोक्तं कुशस्य ह्यभिमंत्रणम् । कृतं तेनैव मुनिना गुरो तां मे प्रकाशय ॥ १ ॥
रामरक्षां वरां पुण्यां बालानां शांतिकारिणीम् ।

श्रीशिव उवाच

इति शिष्यवचः श्रुत्वा रामदासोऽब्रवीद्वचः ॥ २ ॥

श्रीरामदास उवाच

सम्यक् पृष्टं त्वया शिष्य रामरक्षाऽधुनोच्यते । या प्रोक्ता शंभुना पूर्वं स्कंदार्थे गिरिजां प्रति ॥ ३ ॥

श्रीशिव उवाच

देव्यद्य स्कंदपुत्राय रामरक्षाभिमंत्रणम् । कुरु तारकघाताय समर्थोऽयं भविष्यति ॥ ४ ॥
इत्युक्त्वा कथयामास रामरक्षां शिवः स्त्रियै । नमस्कृत्य रामचन्द्रं शुचिर्भूत्वा जितेन्द्रियः ॥ ५ ॥

वीणाकी झनकारके साथ वनमें रामचरित्र गाया करते थे ॥ ८१ ॥ जहाँ-तहाँ मुनियोंकी मण्डलीमें जब वे दोनों सुकुमार बालक रामचरित्रका गायन करते थे तो सबके मुँहसे सहसा यह वाक्य निकल पड़ता था कि हम लोगोंने अपनी लम्बी आयुमें गंधर्वों, किन्नरों, मनुष्यों, देवताओं, पाताललोकवासियों, ब्रह्मलोकवासियों एवं सारे ब्रह्माण्डवासियोंको अनेक गायकोंके गायन सुने हैं, लेकिन उनमें कहीं न तो मैंने इस प्रकार वाद्यकलाकी निपुणता देखी और न गायनमें ऐसी मिठास ही पायी ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ इस तरह सब ऋषियोंसे प्रशंसित होकर वे दोनों एकान्तमें वाल्मीकिके आश्रमपर रहा करते थे । सुवर्णके कङ्कण, नूपुर, केयूर, करधनी, हार तथा कुण्डल पहननेसे वे और भी सुन्दर दीखते थे ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ प्रतिदिन उनकी मनोहर बाललीला देख-देखकर मुनि, सीता, सुमेधा और जनकजी मारे खुशीके फूले नहीं समाते थे ॥ ८६ ॥ इति श्रीशतकोटिरामचरितान्तर्गते श्रीमदानन्दरामायणे वाल्मीकीये पं० रामतेजपाण्डेयकृतभाषाटीकासमन्विते जन्मकाण्डे चतुर्थः सर्गः ॥ ४ ॥

विष्णुदासने कहा--हे गुरुदेव ! जिस रामरक्षा-मंत्रसे वाल्मीकिने कुशका अभिमंत्रण किया था, उसे हमको बताइए ॥ १ ॥ क्योंकि मैंने सुना है कि वह रामरक्षामंत्र बड़ा पवित्र सुन्दर और बालकोंको शान्ति प्रदान करनेवाला है । शिवजीने कहा--इस प्रकार शिष्यकी प्रार्थना सुनकर श्रीरामदास कहने लगे--हे प्रिय शिष्य ! तुमने बहुत अच्छा प्रश्न किया है । मैं तुम्हें वह रामरक्षामन्त्र बतलाता हूँ, जिसे एक बार शिवजीने पार्वतीको स्वामिकार्तिकेयकी रक्षाके लिए बतलाया था ॥ २ ॥ ३ ॥ शिवजी बोले--हे देवि ! आज षडाननके

CC-0. In Public Domain. Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

अथ ध्यानम्

वामे कोदंडदंडं निजकरकमले दक्षिणे बाणमेकं
पश्चाद्भागे च नित्यं दधतमभिमतं सासितूणीरभारम् ।
वामेऽवामेव सद्ध्र्या सह मिलिततनुं जानकीलक्ष्मणाभ्यां
श्यामं रामं भजेऽहं प्रणतजनमनःखेदविच्छेददक्षम् ॥ ६ ॥

अस्य श्रीरामरक्षास्तोत्रमंत्रस्य बुधकौशिकऋषिः श्रीरामचंद्रो देवता राम इति बीजम्
अनुष्टुप् छंदः श्रीरामप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

चरितं रघुनाथस्य शतकोटिप्रविस्तरम् । एकैकमक्षरं पुंसां महापातकनाशनम् ॥ ७ ॥
ध्यात्वा नीलोत्पलश्यामं रामं राजीवलोचनम् । जानकीलक्ष्मणोपेतं जटामुकुटमंडितम् ॥ ८ ॥
सासितूणधनुर्बाणपाणिं नक्तंचरान्तकम् । स्वलीलया जगत्त्रातुमाविर्भूतमजं विभुम् ॥ ९ ॥
रामरक्षां पठेत्प्राज्ञः पापघ्नीं सर्वकामदाम् । शिरो मे राघवः पातु भालं दशरथात्मजः ॥१०॥
कौसल्येयो दृशौ पातु विश्वामित्रप्रियः श्रुती । घ्राणं पातु मखत्राता मुखं सौमित्रिवत्सलः ॥११॥
जिह्वां विद्यानिधिः पातु कंठं भरतवंदितः । स्कंधौ दिव्यायुधः पातु भुजौ भग्नेशकार्मुकः ॥१२॥
करौ सीतापतिः पातु हृदयं जामदग्न्यजित् । पार्श्वे रघुवरः पातु कुक्षी इक्ष्वाकुनंदनः ॥१३॥
मध्यं पातु खरध्वंसी नाभिं जांबवदाश्रयः । सुग्रीवेशः कटिं पातु सक्थिनी हनुमत्प्रभुः ॥१४॥
ऊरू रघूत्तमः पातु गुह्यं रक्षःकुलांतकृत् । जानुनी सेतुकृत्पातु जंघे दशमुखांतकः ॥१५॥
पादौ विभीषणश्रीदः पातु रामोऽखिलं वपुः ।
एतां रामबलोपेतां रक्षां यः सुकृती पठेत् । स चिरायुः सुखी पुत्री विजयी विनयी भवेत् ॥१६॥
पातालभूतलव्योमचारिणश्छद्मचारिणः । न द्रष्टुमपि शक्तास्ते रक्षितं रामनामभिः ॥१७॥
रामेति रामभद्रेति रामचन्द्रेति वा स्मरन् । नरो न लिप्यते पापैर्भुक्तिं मुक्तिं च विंदति ॥१८॥

रक्षार्थ तुम्हें रामरक्षामन्त्र बतला रहा हूँ। अथ ध्यानम्। जिन रामचन्द्रजीके बायें हाथमें धनुष, दाहिने हाथमें एक बाण और पीठपर बाणोंसे भरा हुआ तरकस है। जिनकी बायीं तथा दाहिनी ओर लक्ष्मण और सीता हैं। भक्तोंके मनकी पीड़ा नष्ट करनेमें निपुण श्रीरामचन्द्रजीका मैं भजन करता हूँ॥ ४-६॥ विनियोगके अनन्तर—सौ करोड़ श्लोकोंमें विस्तारसे वर्णित भगवान् रामके चरित्रका एक-एक अक्षर महान् पापोंका भी नाश करता है। नीलकमलकी नाईं श्याम तथा राजीवलोचन, जिनके आस-पास लक्ष्मण तथा जानकीजी विराज रही हैं। जिनका मस्तक जटा-मुकुटसे अलंकृत है। तलवार, तरकस, धनुष और बाणको लिये जो राक्षसोंको यमराज सदृश भीषण दीखते हैं। जो जगत्की रक्षाके निमित्त अपने इच्छानुसार जगतीतलपर अवतीर्ण हुए हैं, ऐसे रामका ध्यान करके सब कामनाओंको पूर्ण करने तथा पापोंका नाश करनेवाले रामरक्षामन्त्रका पाठ करे। राघव यह रामचन्द्रजीका नाम मेरे सिरकी रक्षा करे॥ ७-१०॥ दशरथात्मज ललाटकी रक्षा करें। कौसल्येय नेत्रोंकी, विश्वामित्रप्रिय कानोंकी, मखत्राता नाककी और सौमित्रवत्सल मुखकी रक्षा करें॥ ११॥ विद्यानिधि जिह्वाकी, भरतवंदित कंठकी, दिव्यायुध दोनों कन्धोंकी, भग्नेशकार्मुक भुजाओंकी, सीतापति हाथोंकी, जामदग्न्यजित् हृदयकी, रघुवर पार्श्वभागकी, इक्ष्वाकुनन्दन पेटकी, खरध्वंसी शरीरके मध्यभागकी, जांबवदाश्रय नाभिकी, सुग्रीवेश कमरकी, हनुमत्प्रभु हड्डियोंकी, रघूत्तम दोनों घुटनोंकी, रक्षःकुलांतकृत् गुदाकी और दशमुखान्तक मेरी जाँघोंकी रक्षा करें॥ १२-१५॥ विभीषणको राज देनेवाले पैरोंको और राम सारे शरीरकी रक्षा करें। जो मनुष्य रामके बलसे परिपूर्ण इस रामरक्षामंत्रका पाठ करता है वह चिरायु, सुखी, पुत्रवान्, विजयी और विनयी होता है॥ १६॥ पाताल-चारी, भूमिचारी, व्योमचारी और छद्मचारी कोई भी भूत-प्रेतादि बाधा रामरक्षा-मंत्रसे अभिमंत्रित जनपर दृष्टिपात नहीं कर सकती। जो मनुष्य राम, रामभद्र अथवा रामचन्द्र इस नामका स्मरण करता है, वह पापसे

CC-0. In Public Domain. Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

जगज्जैत्रैकमंत्रेण रामनाम्नाऽभिरक्षितम् । यः कंठे धारयेत्तस्य करस्थाः सर्वसिद्धयः ॥१९॥
वज्रपंजरनामेदं यो रामकवचं पठेत् । अव्याहताज्ञः सर्वत्र लभते जयमंगलम् ॥२०॥
आदिष्टवान् यथा स्वप्ने रामरक्षामिमां हरः । तथा लिखितवान् प्रातः प्रबुद्धो बुधकौशिकः ॥२१॥
रामो दाशरथिः शूरो लक्ष्मणानुचरो बली । काकुत्स्थः पुरुषः पूर्णः कौसल्यानंदवर्धनः ॥२२॥
वेदांतवेद्यो यज्ञेशः पुराणपुरुषोत्तमः । जानकीवल्लभः श्रीमानप्रमेयपराक्रमः ॥२३॥
इत्येतानि जपेन्नित्यं मद्भक्तः श्रद्धयाऽन्वितः । अश्वमेधायुतं पुण्यं संप्राप्नोति न संशयः ॥२४॥
सन्नद्धः कवची खड्गी चापबाणधरो युवा । गच्छन् मनोरथोऽस्माकं रामः पातु सलक्ष्मणः ॥२५॥
तरुणौ रूपसंपन्नौ सुकुमारौ महाबलौ । पुण्डरीकविशालाक्षौ चीरकृष्णाजिनांबरौ ॥२६॥
फलमूलाशनौ दांतौ तापसौ ब्रह्मचारिणौ । पुत्रौ दशरथस्यैतौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ ॥२७॥
धन्विनौ बद्धनिस्त्रिंशौ काकपक्षधरौ श्रुतौ । वीरौ मां पथि रक्षेतां तावुभौ रामलक्ष्मणौ ॥२८॥
शरण्यौ सर्वसत्त्वानां श्रेष्ठौ सर्वधनुष्मताम् । रक्षःकुलनिहंतारौ त्रायेतां नो रघूत्तमौ ॥२९॥

आत्तसज्जधनुषाविषुस्पृशावक्षयाशुगनिषंगसंगिनौ ।
रक्षणाय मम रामलक्ष्मणावग्रतः पथि सदैव गच्छताम् ॥३०॥

आरामः कल्पवृक्षाणां विरामः सकलापदाम् । अभिरामस्त्रिलोकानां रामः श्रीमान् स नः प्रभुः ॥३१॥
रामाय रामभद्राय रामचंद्राय वेधसे । रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः ॥३२॥

श्रीराम राम रघुनंदन राम राम श्रीराम राम राम भरताग्रज राम राम ।
श्रीराम राम रणकर्कश राम राम श्रीराम राम शरणं भव राम राम ॥३३॥

लोकाभिरामं रणरंगधीरं राजीवनेत्रं रघुवंशनाथम् । कारुण्यरूपं करुणाकरं तं श्रीरामचंद्रं शरणं प्रपद्ये ॥
दक्षिणे लक्ष्मणो यस्य वामे च जनकात्मजा । पुरतो मारुतिर्यस्य तं वंदे रघुनंदनम् ॥३५॥

विमुक्त होकर मुक्ति और भुक्तिका भागी होता है ॥ १७ ॥ १८ ॥ समस्त जगत्को जीतनेवाले इस रामरक्षा-मन्त्रको जो मनुष्य कण्ठस्थ कर लेता है तो संसारकी सारी सिद्धियाँ उसके हाथमें आ जाती हैं ॥ १९ ॥ जो प्राणी इस वज्रपंजर रामकवचका पाठ करता है, उसकी आज्ञा कहीं भी नहीं टलती और सर्वत्र उसकी विजय होती है ॥ २० ॥ स्वप्नमें यह रामरक्षामंत्र शिवजीने जैसा बतलाया था, सबेरे सोकर उठते ही विश्वामित्रने उसी तरह लिख लिया ॥ २१ ॥ राम, दाशरथि, शूर, लक्ष्मणानुचर, बली, काकुत्स्थ, पुरुष, कौसल्यानन्दवर्धन, वेदान्तवेद्य, यज्ञेश, पुराणपुरुषोत्तम, जानकीवल्लभ, श्रीमान् तथा अप्रमेय पराक्रम इन नामोंका श्रद्धापूर्वक जप करनेवाला भक्त दस हजार अश्वमेध यज्ञ करनेका फल पाता है। इसमें कोई संशय नहीं है ॥ २२–२४ ॥ सन्नद्धकवची, खड्गी, चापबाणधर, युवा और लक्ष्मणके साथ जाते हुए श्रीरामचंद्र हमारे मनोरथोंकी रक्षा करें ॥२५॥ तरुण, रूपसंपन्न, सुकुमार, महाबली, कमलकी नाईं बड़ी-बड़ी आँखोंवाले, पीतांबरधारी, फल-मूल खानेवाले, उदारप्रकृति, तपस्वी, ब्रह्मचारी, धन्वी, निस्त्रिंशधारी तथा काकपक्षको धारण किये दशरथके दोनों पुत्र राम और लक्ष्मण रास्तेमें जाते समय हमारी रक्षा करें। संसारी जीवोंके आधार, धनुर्धारियोंमें श्रेष्ठ, राक्षसकुलके विनाशक राम और लक्ष्मण मेरी रक्षा करें ॥ २६–२९ ॥ बिल्कुल तैयार धनुष जिसपर बाण चढ़ा है, उसे लिये और अक्षय बाणवाले तूणीरको कसे राम-लक्ष्मण सदा रास्तमें हमारे आगे-आगे चलें ॥ ३० ॥ जो कल्पवृक्षके आराम (बगीचा), समस्त विपत्तियोंके विराम (समाप्ति) और तीनों लोकोंमें अभिराम (सुन्दर) हैं, वे श्रीमान् रामचन्द्रजी हमारे प्रभु हैं ॥३१॥ राम, रामभद्र, सर्वस्रष्टा, रामचंद्र, रघुनाथ, तथा सीताके पति रामचन्द्रजीको मैं प्रणाम करता हूँ ॥ ३२ ॥ हे श्रीराम, हे रघुनन्दन राम, हे भरताग्रज राम, हे रणकर्कश श्रीराम, हे राम, हमको शरण दीजिए ॥ ३३ ॥ संसार भरमें अतिशय सुंदर, संग्राममें निपुण, कमल सरीखे नेत्रोंवाले, रघुवंशके स्वामी करुणाकी मूर्ति और दयाके भण्डार श्रीरामचन्द्रकी मैं शरणमें हूँ ॥३४॥ जिनकी दाहिनी ओर लक्ष्मण, बाईं ओर सीता और सामने हनुमानजी उपस्थित हैं, ऐसे रघुनन्दन रामको मैं

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

गोष्पदीकृतवारीशं मशकीकृतराक्षसम् । रामायणमहामालारत्नं वंदेऽनिलात्मजम् ॥३६॥
अघौघ तिष्ठ दूरे त्वं रोगास्तिष्ठंतु दूरतः । वरीवर्ति सदाऽस्माकं हृदि रामो धनुर्धरः ॥३७॥

मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेंद्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये ॥३८॥
राम राम तव पादपङ्कजं चिंतयामि भवबन्धमुक्तये ।
वंदितं सुरनरेंद्रमौलिभिर्ध्यायितं मनसि योगिभिः सदा ॥३९॥

रामं लक्ष्मणपूर्वजं रघुवरं सीतापतिं सुन्दरं काकुत्स्थं करुणार्णवं गुणनिधिं विप्रप्रियं धार्मिकम् ।
राजेंद्रं सत्यसन्धं दशरथतनयं श्यामलं शांतिमूर्तिं वन्दे लोकाभिरामं रघुकुलतिलकं राघवं रावणारिम् ।
एतानि रामनामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत् । अपुत्रो लभते पुत्रं धनार्थी लभते धनम् ॥४१॥

माता रामो मत्पिता रामचन्द्रः स्वामी रामो मत्सखा रामचन्द्रः ।
सर्वस्वं मे रामचन्द्रो दयालुर्नान्यं जाने नैव जाने न जाने ॥४२॥
श्रीरामनामामृतमन्त्रबीजसंजीवनी चेन्मनसि प्रविष्टा ।
हालाहलं वा प्रलयानलं वा मृत्योर्मुखं वा विशतां प्रविष्टा ॥४३॥
श्रीशब्दपूर्वं जयशब्दमध्यं जयद्वयेनापि पुनः प्रयुक्तम् ।
त्रिःसप्तकृत्वो रघुनाथनाम जपन्निहन्याद्द्विजकोटिहत्याः ॥४४॥

एव गिरींद्रजे प्रोक्ता रामरक्षा मया तव । मयोपदिष्टा या स्वास्यैर्विश्वामित्राय वै पुरा ॥४५॥

श्रीरामदास उवाच

इति शिवेनोपदिष्टां श्रुत्वा देवी गिरीन्द्रजा । रामरक्षां पठित्वा सा स्कन्दं सममिमंत्रयत् ॥४६॥

वन्दना करता हूँ ॥ ३५ ॥ जिन्होंने समुद्रको गौके खुरभर जलवाला बनाया, राक्षसोंको मच्छड़ोंके समान नष्ट किया और जो रामायणरूपी महामालाके मुख्य रत्न हैं, ऐसे पवनकुमार हनुमान्‌जीको मैं प्रणाम करता हूँ ॥३६॥ हे पापोंके समूह ! तुम हमसे दूर रहो और हे रोगगण ! तुम हमारे पाससे भाग जाओ । क्योंकि हमारे हृदयमें धनुर्धारी रामचन्द्रजी बैठे हुए हैं ॥ ३७ ॥ मनके सदृश जिनकी गति है, वायुके सदृश जिनका वेग है, जिन्होंने इन्द्रियोंको वशमें कर लिया है, जो बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ हैं । ऐसे वायुके पुत्र, वानरी सेनाके सेनापति और श्रीरामचन्द्रजीके दूत हनुमानकी मैं शरणमें हूँ ॥ ३८ ॥ हे राम ! हे राम ! सांसारिक बन्धनोंसे मुक्त होनेके लिए सुर-नर इन्द्रादि तकके मस्तकोंसे पूजित आपके चरणोंका मैं सदा ध्यान करता हूँ । क्योंकि योगी लोग भी सदा-सर्वदा उन चरणोंके चिन्तनमें लीन रहते हैं ॥ ३९ ॥ लक्ष्मणके ज्येष्ठ भ्राता, रघुवंशमें श्रेष्ठ, सीताके पति, परमरूपवान्, ककुत्स्थके वंशज, करुणाके वारिधि, गुणोंके निधि, ब्राह्मणोंके प्रिय, धर्मके तत्त्वज्ञ, राजाओंके राजा, सत्यप्रतिज्ञ, दशरथके पुत्र, श्यामरूप, शान्तिके मूर्तिस्वरूप, संसारके आनन्ददाता, रघुवंशके तिलक-स्वरूप, रघुवंशज एवं रावणके शत्रु रामचन्द्रजीको मैं प्रणाम करता हूँ ॥ ४० ॥ जो प्राणी सबेरे उठकर इन नामोंका पाठ करता है, वह यदि अपुत्र हो तो उसे पुत्र मिलता है और धनकी इच्छा रखनेवाला हो तो धन मिलता है ॥ ४१ ॥ राम ही मेरे पिता हैं, राम ही माता हैं, वे ही मेरे स्वामी और सखा हैं । दयालु श्रीरामचन्द्रजी ही मेरे सर्वस्व हैं । उन्हें छोड़कर मैं और किसीको नहीं जानता—किसीको नहीं जानता ॥ ४२ ॥ जिसके हृदयमें रामनामामृतमंत्ररूपिणी संजीवनी विद्यमान रहती है, वह हालाहल, प्रलयानल अथवा मृत्युके मुखमें भी क्यों न कूद जाय, उसको कहीं भी भय नहीं है ॥ ४३ ॥ पहले श्रीशब्द, बादमें रामनाम, फिर जय शब्द, फिर रामनाम, फिर दो बार जयशब्द जोड़कर (अर्थात् श्रीराम जय राम जय जय राम) इक्कीस बार जप करनेवाला प्राणी करोड़ों ब्रह्महत्याओं जैसे महान् पातकोंको भी नष्ट कर देता है ॥ ४४ ॥ हे पार्वती ! मैंने तुम्हें वह रामरक्षामन्त्र बतलाया है, जिसे एक बार स्वप्नमें मैंने महर्षि विश्वामित्रको बतलाया था । श्रीरामदासने कहा—इस प्रकार शिवजीके बतलाये हुए रामरक्षामन्त्रको सुनकर पार्वतीजीने स्वामिकार्तिकेयका उन्हीं

CC-0. In Public Domain. Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

तस्यास्तेजोबलेनैव जघान तारकासुरम् । षडाननः क्षणादेव कृतकृत्योऽभवत्पुरा ॥४७॥
सैवेयं रामरक्षा ते मयाऽऽख्याताऽतिपुण्यदा । यस्याः श्रवणमात्रेण कस्यापि न भयं भवेत् ॥४८॥
वाल्मीकिनाऽनया पूर्वं कुशाय ह्यभिषेचनम् । कृतं बालग्रहाणां च शांत्यर्थं सा मयोदिता ॥४९॥
बालानां ग्रहशांत्यर्थं जपनीया निरन्तरम् । रामरक्षा महाश्रेष्ठा महाघौघनिवारिणी ॥५०॥
नास्याः परतरं स्तोत्रं नास्याः परतरो जपः । नास्याः परतरं किंचित्सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥५१॥

इति श्रीशतकोटिरामचरितांतर्गते श्रीमदानन्दरामायणे वाल्मीकीये जन्मकाण्डे
रामरक्षाकथनं नाम पंचमः सर्गः ॥ ५ ॥

षष्ठः सर्गः

(लवका अयोध्यासे कमलपुष्प लाकर माता सीताको देना)

श्रीरामदास उवाच

एकदा जानकी प्राह वाल्मीकिं मुनिपुंगवम् । कथयस्व व्रतं येन रामयोगो भवेन्मम ॥ १ ॥
तत्सीतावचनं श्रुत्वा वाल्मीकिस्तां वचोऽब्रवीत् । प्रतिपद्दिनमारभ्य यावत्सा नवमी सिता ॥ २ ॥
तावन्नवदिनं सीते व्रतं कुरु मयोच्यते । प्रतिपदि रामचन्द्रपादुके धातुनिर्मिते ॥ ३ ॥
कृत्वाऽर्च्यं नवकमलैर्देहि मंत्रांजलिं शुभाम् । ततः पुत्राननाभ्यां त्वं जन्मकाण्डं शुभं शृणु ॥ ४ ॥
अष्टादशकमलैश्च द्वितीयायां शुभांजलिम् । मंत्रैर्देहि पूजनान्ते पतिपादुकयोर्मुदा ॥ ५ ॥
पतिं विना स्त्रिया नान्यत्पूजनीयं हि दैवतम् । जन्मकांडं द्विवारं तु शृणु भक्त्या शुचिव्रते ॥ ६ ॥
एवं वृद्धिर्नवाब्जैश्च कार्या सीते दिने दिने । नवम्यामेकाशीत्यब्जैः पूज्यस्व भर्तृपादुके ॥ ७ ॥
नववारं जन्मकांडं पुत्रास्याभ्यां सुखं शृणु । ततो दशम्यां सुस्नातैकाशीति द्विजदंपतीन् ॥ ८ ॥
संपूज्य वस्त्राभरणैर्भोजयस्वात्र मैथिलि । दत्त्वा तेभ्यो दक्षिणास्त्वं विसर्जय प्रणम्य तान् ॥ ९ ॥

मंत्रोंसे अभिमन्त्रण किया ॥ ४५–४६ ॥ उसी मन्त्रके तेज और बलसे षडाननने तारकासुर जैसे महान् शत्रुको मारकर अपना काम पूरा कर लिया था ॥ ४७ ॥ वही रामरक्षामंत्र मैंने तुम्हें बतलाया है। जिसके एक बार श्रवण कर लेनेसे संसारमें किसीका भय नहीं रह जाता ॥ ४८ ॥ इसी रामरक्षा मंत्रसे वाल्मीकिने कुशका अभिषेक किया था। बालकोंका दुःख दूर करनेके लिए इसे मैंने तुम्हें बतलाया है ॥ ४९ ॥ बालकोंका ग्रह शान्त करनेके लिए सदा इसका जप करना चाहिये। यह महान् मंत्र है। यह बड़े-बड़े पापोंके समूहको नष्ट कर देता है। इससे बढ़कर कोई स्तोत्र है ही नहीं। मैं तुमसे सच-सच कहता हूँ कि इससे श्रेष्ठ और कोई मंत्र नहीं है ॥ ५० ॥ ५१ ॥ इति श्रीशतकोटिरामचरितांतर्गते श्रीमदानन्दरामायणे वाल्मीकीये पं० रामतेजपाण्डेय-विरचित'ज्योत्स्ना'भाषाटीकासमन्विते जन्मकाण्डे पञ्चमः सर्गः ॥ ५ ॥

श्रीरामदासने कहा—एक दिन सीताजी मुनियोंमें श्रेष्ठ वाल्मीकिसे कहने लगीं कि हमें कोई ऐसा व्रत बतलाइए, जिससे मैं फिर अपने पतिदेव (राम) को प्राप्त कर लूँ ॥ १ ॥ सीताकी उस प्रार्थनाको सुनकर वाल्मीकिने कहा कि प्रतिपदा तिथिसे लेकर नवमी पर्यन्त अर्थात् नौ दिनका मैं जो व्रत बतला रहा हूँ, उसे करो। प्रतिपदाको धातुसे बनी रामकी चरणपादुकाका पूजन करके नौ कमलके फूलोंसे मंत्राञ्जलि दो। इसके अनन्तर अपने पुत्रोंके मुखसे आनन्दरामायणके जन्मकांडकी कथा सुनो ॥ २–४ ॥ फिर द्वितीयाको पादुकाकी पूजा करके अठारह कमलोंकी पुष्पाञ्जलि दो। स्त्रीके लिए पतिके अतिरिक्त दूसरा कोई पूज्य देवता नहीं है। बादमें द्वितीयाको दो बार जन्मकांडकी कथा सुनो ॥ ५ ॥ ६ ॥ इस तरह प्रतिदिन कमलके फूलोंकी संख्या बढ़ाती हुई नवमीको ८१ फूलोंसे पतिकी चरणपादुकाको मंत्राञ्जलि दो और कथाकी भी संख्या बढ़ाती हुई नवमीको अपने पुत्रोंके मुखसे नौ बार जन्मकांडकी कथा सुनो। दशमीको स्नानादि नित्यकर्म करनेके

CC0. In Public Domain. Kirti Kant Sharma, Najafgarh Delhi Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

अनेन व्रतराजेन जन्मकाण्डश्रवादपि । अचिरात्पतिना योगं प्राप्स्यसि त्वं विदेहजे ॥१०॥
संयोगीकरणं नाम व्रतं चेदं सुपुण्यदम् । ये कुर्वंत्यत्र मनुजाः स्त्रीयैर्योगं लभन्ति ते ॥११॥
तन्मुनेर्वचनं श्रुत्वा जानकी प्राह तं पुनः । बहून्यब्जानि साकेते पुष्पारामजलाशये ॥१२॥
सन्ति कस्तत्र वै गन्तुं समर्थस्त्विह वर्तते । रामाज्ञया रामदूतैः क्रियते रक्षणं सदा ॥१३॥
तत्सीतावचनं श्रुत्वा तत्पुरः संस्थितो लवः । अब्रवीन्मातरं वाक्यं पञ्चवर्षवयःस्थितः ॥१४॥
अम्बारम्भं व्रतस्याद्य त्वं कुरुष्वाचिरादिह । अब्जान्यहं प्रदास्यामि समानीय निरन्तरम् ॥१५॥
तल्लवस्य वचः श्रुत्वा विहस्यालिंग्य बालकम् । चुचुम्ब तन्मुखं सीता लवं वचनमब्रवीत् ॥१६॥
पङ्कजानि कथं वत्स त्वं समानीय दास्यसि । असंख्यातै रामदूतैः क्रियते रक्षणं सदा ॥१७॥
तन्मातृवचनं श्रुत्वा लवः प्राहाथ मातरम् । अम्ब त्वत्स्तन्यपानेन वाल्मीकेः शस्त्रविद्यया ॥१८॥
तथाशीर्भिर्मुनेश्चापि रामस्यापि भयं न मे । पश्याम्ब पौरुषं मेऽद्य मामनुज्ञातुमर्हसि ॥१९॥
इत्युक्त्वा मातरं नत्वा वाल्मीकिं प्रणिपत्य च । आशीर्भिरीडितस्ताभ्यां धृततूणीरकार्मुकः ॥२०॥
वस्त्रालंकारसंयुक्तस्त्वेकाकी रथमास्थितः । ययौ लवस्त्वयोध्यायां श्रीविहीनां जवेन सः ॥२१॥
क्रोशोपरि रथं स्थाप्य पद्भ्यामाराममाययौ । तावन्मध्याह्नसमये गता आरामरक्षकाः ॥२२॥
भोजनार्थं स्वगेहानि लवोऽब्जानि तदाऽहरत् । पुनः स्वस्यंदने स्थित्वा गत्वाऽऽश्रमपदं मुनेः ॥२३॥
नत्वा मुनिं मातरं स्वां पंकजान्यर्पयन्मुदा । मुदिता जानकी चापि व्रतारम्भमथाकरोत् ॥२४॥
एवं सप्तदिनान्यब्जान्यानयामास बालकः । न विदू रामदूतास्ते नीयंतेऽब्जानि चेति हि ॥२५॥
अथाष्टमीदिनेऽयोध्यां पूर्ववत्स लवो ययौ । आरामस्य बहिः स्थाप्य रथं पद्भ्यां ययौ लवः ॥२६॥

पश्चात् ८१ द्विजदम्पतीकी वस्त्राभूषण आदिसे पूजा करके उन्हें भोजन कराओ और दक्षिणा देकर विदा करो। इस व्रतराजके करने तथा जन्मकांडकी कथा सुननेसे शीघ्र ही तुम्हारे पति तुम्हें मिल जायँगे ॥७–१०॥ इस व्रतका नाम ही संयोगीकरण व्रत है। जो कोई यह पुनीत व्रत करता है, उसे अपने प्रियजनकी प्राप्ति होती है॥ ११ ॥ वाल्मीकि मुनिकी बात सुनकर सीताने कहा कि अयोध्याके बगीचेवाले सरोवरमें बहुत कमल होता है, वहाँ ही इतने फूल मिल सकेंगे कि जिनसे मैं अपना व्रत पूर्ण कर सकूँ। लेकिन वहाँसे उन्हें लायेगा कौन ? रामचन्द्रजीकी आज्ञासे वहाँ बहुतेरे रक्षक उन फूलोंकी रखवाली करते हैं ॥ १२ ॥ १३ ॥ सीताकी बात सुनकर पास खड़े लवने, जिसकी अवस्था पांच वर्षकी हो चुकी थी, मातासे कहा–॥ १४ ॥ माँ ! तुम आजसे अपना व्रत प्रारम्भ कर दो, मैं नित्य कमलके फूल लाकर तुम्हें दूँगा ॥ १५ ॥ लवकी वीरतापूर्ण वाणी सुनकर सीता हँसीं और छातीसे लगाकर उसका मुख चूमती हुई कहने लगीं—॥ १६ ॥ बेटे ! तुम फूल कैसे लाओगे ? वहाँ रामके असंख्य सिपाही उनकी रक्षा करते हैं ॥ १७ ॥ सीताकी बात सुनकर लवने कहा—माता ! तुम्हारे पवित्र स्तनोंके दुग्ध, महर्षि वाल्मीकिकी सिखायी हुई शस्त्रविद्या और उनके आशीर्वादके प्रभावसे मैं रामसे भी नहीं डरता। आप मुझे आज्ञा दें और मेरा पुरुषार्थ देखें ॥ १८ ॥ १९ ॥ इतना कहकर लवने माता तथा वाल्मीकिको प्रणाम किया। फिर उनका आशीर्वाद लेकर धनुष-बाण सहित एक रथपर जा बैठे और उस अयोध्याकी ओर बढ़े, जो बहुत दिनोंसे कान्तिहीन हो चुकी थी ॥ २० ॥ २१ ॥ बगीचेके एक कोस आगे ही लवने अपना रथ रोक दिया और पैदल ही बगीचेमें जा पहुँचे। दोपहरका समय था। बगीचेके रक्षक भोजन करनेके लिए अपने-अपने घर जा चुके थे। इसलिए लवको फूल लेनेमें कोई बाधा नहीं हुई, फूल लेकर लवने अपने रथपर रखा और आश्रमकी ओर चल दिये ॥ २२ ॥ २३ ॥ वहाँ पहुँचकर लवने माता और वाल्मीकिको प्रणाम करके फूलको सामने रखा। जानकीने भी प्रसन्नताके साथ व्रत प्रारम्भ किया ॥ २४ ॥ इस प्रकार सात दिन तक लव बराबर फूल ले गये, लेकिन रामके दूतोंको कुछ भी पता नहीं लगा। आठवें दिन अष्टमी तिथिको रोजकी तरह लव फिर वहाँ गये। रथको बाहर रोका और सरोवरमें पहुँचकर निर्भीक-भावसे फूल तोड़कर लाने लगे। संयोगवश उस दिन सिपाही लोग भोजन करके बगीचेमें पहुँच

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

गत्वाऽऽरामस्य कासार गृहीत्वाऽब्जानि निर्भयः। शनैर्यावद्रथं प्राप तावदारामपाऽऽययुः ॥२७॥
ते त दृष्ट्वा लवं साब्जं पप्रच्छुर्विस्मयान्विताः । न त्वं दृष्टः कदाऽस्माभिः श्रीरामानुचरेषु हि॥२८॥
कदारभ्य रामसेवा त्वया चाङ्गीकृता वद । यतस्त्वं निर्भयोऽब्जानि गृहीत्वा गच्छसि प्रभुम्॥२९॥
रामदूतवचः श्रुत्वा विहस्याह लवोऽपि सः । वाल्मीक्यनुचरश्चाहं न रामदर्शनं मम ॥३०॥
दासोऽहं मुनिराजस्य वाल्मीकेः शुद्धचेतसः । तदाज्ञया वै नीयन्ते कमलानि मया मुदा ॥३१॥
इति तद्वचनं श्रुत्वा वाल्मीकीयं लवं तदा । ज्ञात्वा दूताः पारकीयं क्रोधाद्वचनमब्रुवन् ॥३२॥
रामस्त्वया न दृष्टोऽत्र न नः पृष्टस्त्वया पुनः । नाज्ञापितोऽसि रामेण नीयंतेऽब्जानि प्रत्यहम् ॥३३॥
न ज्ञातमेतदस्माभिस्त्विदानीं तिष्ठ मा व्रज । अपराध्यसि रामस्य त्वां नेष्यामो वयं प्रभुम् ॥३४॥
इत्युक्त्वा तस्य पन्थानं रुरुधू रामसेवकाः । चतुर्दश शस्त्रहस्ता सशता रामतो यदा ॥३५॥
तान्दृष्ट्वा स्यन्दनस्थः स लवोऽप्याह विहस्य च । यूयं गच्छत श्रीरामं मद्वृत्तं ब्रूतमादरात् ॥३६॥
यद्यस्ति पौरुषं रामे तर्हि यास्यति मां प्रति । तत्तस्य वचनं श्रुत्वा क्रोधाद्दूता वचोऽब्रुवन् ॥३७॥
कथं वत्स मर्त्तुकामस्त्वमित्थं वल्गसे मुधा । बद्ध्वा त्वां वयमेवाद्य विनेष्यामो रघूत्तमम् ॥३८॥
इत्युक्त्वा ते लवं धर्तुं ययुस्तस्य रथांतिकम् । तान्दृष्ट्वा निकटं प्राप्तान् रामदूतान्लवोऽपि सः ॥३९॥
टणत्कृत्य महच्चापं शरान्संधाय वेगतः ।अब्रवात्तान्पुनर्वाक्यं माऽऽगन्तव्यं ममान्तिकम्॥४०॥
मार्गणैरधुना युष्मान् त्यजामि राघवान्तिके । इत्युक्त्वा तान्पुनर्दृष्ट्वाऽऽरमानं धर्तुं समुद्यतान् ॥४१॥
रामाग्रे प्राक्षिपद्बाणैर्लीलयाऽध्वरमण्डपे । चतुर्दश रामदूता लवमार्गणताडिताः ॥४२॥
निपेतुर्मूर्च्छिताः सर्वे रामाग्रे जाह्नवीतटे । शतशो रामदूतास्ते दृष्ट्वा चक्रुः पलायनम् ॥४३॥
लवोऽपि विजयी शीघ्रं पूर्ववत्स्वाश्रमं ययौ । समर्प्याब्जानि सीतायै सर्वं वृत्तं न्यवेदयत् ॥४४॥

गये थे ॥ २५-२७ ॥ लवको फूल लिये देखकर विस्मयपूर्वक वे बोले—हमने तुम्हें कभी रामचन्द्रजीके सेवकोंमें नहीं देखा है ॥ २८ ॥ तुमने कब नौकरी की है ? जो इस तरह निर्भय होकर कमलके फूल ले जा रहे हो ॥ २९ ॥ उन दूतोंकी बात सुनकर हँसते हुए लवने कहा—मैंने तो अभी तक रामको देखा भी नहीं है ॥ ३० ॥ रामका नहीं, मैं महर्षि वाल्मीकिका सेवक हूँ । उन्हींके आज्ञानुसार मैं यहांसे फूल ले जाता हूँ। किन्तु तुमने आज ही हमको देखा है। इसके पहले कभी नहीं देख पाया ॥ ३१ ॥ इस तरह अपनेको वाल्मीकिका सेवक बतलानेपर दूतोंकी समझमें आया कि यह कोई अजनबी मनुष्य है। यह जानते ही वे मारे क्रोधके तमतमा उठे। उन्होंने कहा—॥ ३२ ॥ तुमने न रामकी आज्ञा ली, न हम लोगोंहीसे पूछा और रोज फूल ले जाते हो ॥ ३३ ॥ यह बात हमको मालूम नहीं थी। अस्तु, अब ठहरो। तुम रामचन्द्रजीके अपराधी हो। अतएव हम तुम्हें उनके पास ले चलेंगे ॥ ३४ ॥ ऐसा कहकर उन लोगोंने लवका रास्ता रोक लिया। जब एक सौ चौदह सशस्त्र सैनिकोंने लवको घेर लिया। तब लवने रथपर बैठे ही बैठे उनकी ओर देख तथा हँसकर कहा—तुम लोग रामके पास जाकर हमारा वृत्तान्त कहो ॥ ३५ ॥ यदि राममें कुछ सामर्थ्य होगी तो वे स्वयं मेरे सामने आयेंगे। एक पाँच वर्षके बच्चेकी ऐसी बातें सुनकर दूतोंने क्रोधपूर्वक कहा—॥३६॥३७॥ हे बच्चे ! तुम क्यों मरना चाहते हो, जो ऐसी बढ़-बढ़कर बातें करते हो ? तुमको बाँधकर हमीं लोग उनके पास अभी लिये चलते हैं ॥ ३८ ॥ ऐसा कहकर लवको पकड़नेके लिए कई दूत आगे बढ़े। उनको निकट देखकर लवने तुरन्त अपने धनुषका टंकोर करके उसपर एक बाण चढ़ाया और उनसे कहा—सावधान ! मेरे पास न आना ॥ ३९ ॥ ४० ॥ नहीं मानोगे तो मैं इसी धनुष और बाणसे तुम लोगोंको उठाकर रामके पास फेंक दूँगा। ऐसा कहकर लवने देखा कि वे लोग फिर भी उन्हें पकड़नेका प्रयत्न कर रहे हैं ॥ ४१ ॥ ऐसी दशामें लवने बाणोंसे दूतोंको उठाकर फेंका और वे गङ्गाके समीप रामकी यज्ञशालामें मूर्छित होकर जा गिरे। इस प्रकार लवका पराक्रम देखकर रामके जो सैकड़ों सैनिक वहाँ बचे थे, वे सब इधर-उधर भाग गये ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ तब विजयी होकर वे अपने आश्रमकी ओर बढ़े। वहाँ पहुँचकर लवने कमल

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

चतुर्दश रामदूताः स्वस्थचित्ताश्चिरेण ते । सर्वं वृत्तं राघवाय कथयामासुरादरात् ॥४५॥
तच्छ्रुत्वा रामचन्द्रोऽपि विस्मयाविष्टमानसः । सहस्रदूतानारामरणक्षणार्थं प्रचोदयत् ॥४६॥
लवोऽप्यथ नवम्यां स साकेतं पूर्ववद्ययौ । सहस्रं रामदूतास्ते लवं योद्धुं समुद्यताः ॥४७॥
लवस्तानाह युष्माकं स्वामिना राघवेण हि । यदा सीता वने त्यक्ता जयश्रीश्च गता तदा ॥४८॥
युष्माकं राघवस्यापि गच्छध्वं राघवं पुनः । युष्माभिर्मा मया युद्धं कर्तव्यं मरणोन्मुखैः ॥४९॥
सीतात्यागे तु युष्माकं स्वामिनः पौरुषं न माम् । इति ते लववाग्बाणैर्भिन्नमर्मस्थलास्तदा ॥५०॥
दूताः शस्त्राणि मुमुचुर्लवोपरि महास्वनैः । लवोऽपि चापमाकृष्य रामदूतान्स्वमार्गणैः ॥५१॥
प्राक्षिपत्पूर्ववद्रामं तच्छस्त्रौघं निवार्य च । आरामतो यदा दूताश्चक्रुः सर्वे पलायनम् ॥५२॥
ययौ लवः स विजयी पूर्ववत्कमलान्वितः । आश्रमं मातरं नत्वा सर्वं वृत्तं न्यवेदयत् ॥५३॥
पुत्रस्य पौरुषं श्रुत्वा तुतोष जानकी तदा । वृत्तं निवेदयामासु रामदूता रघूत्तमम् ॥५४॥
मूर्च्छां लवशरैः प्राप्ता भिन्नदेहा मखांगणे । राम राम महाबाहो शृणुष्वापूर्वमादरात् ॥५५॥
पञ्चवर्षीयबालेन वयमद्य पराजिताः । वाल्मीकेर्लब्धविद्यः स न जेयो लक्ष्मणादिभिः ॥५६॥
तद्वधे मंत्रयस्वाद्य त्वमुपायं रघूत्तम । सीतात्यागादिवचनैर्नस्तवापि च बालकः ॥५७॥
चकार निंदां श्रीराम गतभीस्त्वेक एव यः । तत्तेषां वचनैर्वृत्तं कृत्स्नमाकर्ण्य राघवः ॥५८॥
संमंत्र्य सचिवैर्दूतं वाल्मीकिं प्रैषयज्जवात् । नत्वा मुनिं रामदूतो रामवाक्यं न्यवेदयत् ॥५९॥
यस्ते शिष्यो महावीरः सोऽपराध्यस्ति वै मम । तं प्रेषयाथवा तेन त्वमागच्छस्व मन्मखम् ॥६०॥

सीताको दिया और उस दिनका सारा हाल कह सुनाया ॥४४॥ जो दूत रामकी यज्ञशालामें गिरे थे, वे बहुत देर तक मूर्छित पड़े रहे। जब चेतना आयी, तब सादर उन्होंने रामको लवका सब समाचार सुनाया ॥४५॥ सो सुनकर रामचन्द्रजीको भी बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने फिरसे एक हजार दूतोंको बगीचेकी रखवालीके लिए नियुक्त कर दिया ॥ ४६ ॥ दूसरे दिन अर्थात् नवमीको लव फिर फूल लेनेके लिए बगीचेमें जा पहुंचे। लवने दूतोंको देखकर कहा कि जिस दिन तुम्हारे प्रभु रामने सीताको वनमें भेज दिया, उसी दिन उनकी जयश्री भी विदा हो गयी ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ तुम्हें चाहिए कि तुम रामके पास जाकर लड़ाई करनेसे इनकार कर दो। तुम मरणोन्मुख हो। अतएव मैं नहीं चाहता कि तुम्हारे साथ युद्ध करूँ ॥ ४९ ॥ सीताको त्यागनेवाले तुम्हारे प्रभु रामके साथ संग्राम करना मुझे उचित नहीं जँचता। इस प्रकार लवके बचनरूपी बाणोंसे सैनिकोंके हृदय विदीर्ण हो गये ॥५०॥ तब उन्होंने लवपर बाणवर्षा आरंभ कर दी। उधर लवने भी अपने बाणोंसे सैनिकोंके प्रहार बचाते हुए अपने बाणोंसे उनको उठा-उठाकर रामके पास फेकना आरम्भ किया। थोड़ी देरमें ही जब दूत बगीचा छोड़-छोड़कर भाग निकले। तब लव अपनेको विजयी मानते हुए रोजकी तरह फूल लेकर आश्रमको लौट गये। वहाँ पहुँचकर लवने सीता माताको प्रणाम किया और उस दिनका भी सारा हाल सुनाया ॥ ५१–५३ ॥ बेटेका पुरुषार्थ सुनकर सीता परम प्रसन्न हुई। इधर रामचन्द्रके दूतोंने रामके पास जाकर सब अपनी आपबीती कह सुनायी ॥ ५४ ॥ जिनको लवने अपने बाणसे उठाकर रामके पास फेंका था, वे लोग घायल होकर बहुत देर तक मूछित अवस्थामें ही पड़े रहे। जब होशमें आये तो कहने लगे-हे राम! हे महाबाहो! मैं जो कह रहा हूँ, उसे तनिक ध्यान देकर सुनिए। आज हम सब वाल्मीकिके एक शिष्यसे, जिनकी अवस्था अभी पाँच वर्षकी है, परास्त हो गये। मेरा तो यहाँतक विश्वास है कि आपके भ्राता लक्ष्मण आदि भी उसे नहीं हरा सकते॥ ५५ ॥ ५६ ॥ हे रघूत्तम! उसे मारनेके लिए आप कोई उपाय सोचिए। सीतात्याग आदिकी बातें दुहराकर उस एकाकी बालकने हमारी और आपकी भी भरपूर निन्दा की है। उनकी बातें सुनीं तो मंत्रियोंसे परामर्श करके रामने तुरंत कई दूतोंको वाल्मीकिके आश्रमपर भेजा। वे दूत वाल्मीकिके पास पहुँचे और उन्हें प्रणाम करके रामका सन्देश इस तरह सुनाने लगे- ॥ ५७–५९ ॥ रामचन्द्रने कहा है कि आपका महावीर शिष्य लव हमारा अपराधी है। उसे या तो हमारे

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

विस्मृत्यापूर्वमेव त्वं नाहूतोऽसि क्षमस्व तत् । तद्दूतवचनं श्रुत्वा रामीयं मुनिरब्रवीत् ॥६१॥
शिष्याभ्यामध्वरं चाहमेव यास्यामि त्वं व्रज । तथेति रामदूतोऽपि मुनिं नत्वा ययौ मखम् ॥६२॥
जानन्नेव भावि वृत्तमादौ रामो मुनिं मखम् । नाह्वयामास शिष्याभ्यां लौकिकीं रीतिमाश्रितः ॥६३॥
स्वीयव्रतसमाप्तिं साऽकरोत्सीताऽपि सादरम् ।

विष्णुदास उवाच

अशक्तश्च कथं कार्यं व्रतमेतद्वदस्व माम् ॥६४॥

श्रीरामदास उवाच

कांचनस्याथवा रौप्यस्याथवा ताम्रनिर्मिते । कार्ये द्वे पादुके रम्ये राघवस्य यथासुखम् ॥६५॥
अभावे कमलानां च पुष्पैरंजलिरीरिता । एकाशीतिदंपतीनां न शक्तिः पूजने तदा ॥६६॥
पूजनीयानि युग्मानि नव शक्त्याऽथवा सुखम् । स्वशक्त्या पूजनं कार्यं वित्तशाठ्यं परित्यजेत् ॥६७॥
अनेकदूरगस्यापि संयोगश्च भवेज्जगत् । भाविकार्याणि वेगेन भविष्यन्ति न संशयः ॥६८॥

इति श्रीशतकोटिरामचरितांतर्गते श्रीमदानन्दरामायणे वाल्मीकीये जन्मकाण्डे षष्ठः सर्गः ॥ ६ ॥

सप्तमः सर्गः

(राम-लक्ष्मण आदिका लव-कुशके साथ युद्ध)

श्रीरामचन्द्र उवाच

अथ रामोऽपि धर्मात्मा चरमे तुरगाध्वरे । हयं मुमोच शत्रुघ्नस्तस्य पृष्ठे ययौ जवात् ॥१॥
दक्षिणां पश्चिमामाशामुत्तरां तुरगोत्तमः । अतिक्रम्य तथा प्राचीं यज्ञस्थानं न्यवर्तत ॥२॥
नृपतिभ्यः समस्तेभ्यः शत्रुघ्नो वसु कोटिशः । गृहीत्वा तैर्नृपैर्युक्तस्तुरगस्यानुगो ययौ ॥३॥

दूतोंके साथ भेज दीजिए अथवा आप स्वयं अपने साथ लेकर हमारे यज्ञमण्डपमें आइए ॥ ६० ॥ भूलसे मैंने आपको पहले निमन्त्रण नहीं दिया था, सो क्षमा कीजिएगा । इस प्रकार दूतोंके मुखसे रामका सन्देश सुनकर महर्षि वाल्मीकिने कहा—॥ ६१ ॥ हम अपने शिष्योंके साथ स्वयं यज्ञमण्डपमें आयेंगे, तुम लोग जाओ । रामके दूतोंने ऋषिराजके वचन सुनकर प्रणाम किया और वहाँसे प्रस्थान करके रामकी यज्ञशालाको चल पड़े ॥६२॥ राम इस भावी घटनाको पहिलेसे ही जानते थे । इसीलिए लौकिक रीति निभाते हुए शिष्योंके साथ वाल्मीकिजीको पहले यज्ञमें नहीं बुलाया था ॥ ६३ ॥ उधर सीताने भी नौ दिनवाला व्रत समाप्त कर लिया । विष्णुदासने पूछा—जो लोग सामर्थ्यहीन हैं, वे इस व्रतको कैसे करेंगे ? सो बताइए ॥ ६४ ॥ श्रीरामदासने उत्तर दिया—यदि सुवर्णकी पादुका न बनवा सके तो चाँदीकी बनवा ले, वह भी न हो सके तो तामेकी दो चरणपादुकाएँ बनवानी चाहिए ॥ ६५ ॥ यदि उतने कमलके फूल न मिल सकें तो साधारणतया किसी भी फूलकी अंजली दे । यदि इक्यासी द्विजदम्पतीकी पूजा करनेकी सामर्थ्य न हो तो नौ द्विजदम्पतीका ही पूजन करे । उसके भी अभावमें अपनी शक्तिके अनुसार पूजा करे, लेकिन उनमें कंजूसीं न होने पाये ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ इस व्रतको करनेसे चाहे कितनी ही दूरीपर रहनेवाले भी प्रियजनका मिलाप अवश्य हो जाता है । इसके अतिरिक्त जितने भी भविष्यके कार्य होंगे, वे सब सम्पन्न हो जायँगे । इसमें कोई संशय नहीं है ॥ ६८ ॥ इति श्रीमदानन्दरामायणे वाल्मीकीये पं० रामतेजपाण्डेयकृत 'ज्योत्स्ना' भाषाटीकासमन्विते जन्मकाण्डे षष्ठः सर्गः ॥ ६ ॥

श्रीरामदास बोले—इस प्रकार रामचन्द्रने ९९ अश्वमेघ यज्ञ पूर्ण कर लिये । अन्तिम सौवें यज्ञके लिए भी घोड़ा अभिषिक्त करके छोड़ा और शत्रुघ्न उसकी रक्षा करनेके लिए उसके साथ गये ॥ १ ॥ दक्षिण, पश्चिम, पूर्व और उत्तर दिशाकी प्रदक्षिणा करके घोड़ा रामचन्द्रजीके यज्ञमण्डपकी ओर लौट पड़ा ॥ २ ॥ रास्तेमें कितने ही राजाओंसे अनेक प्रकारकी भेंटें ले लेकर उन राजाओंको अपने साथ लिये शत्रुघ्न अश्वसमेत

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

सेनया चतुरंगिण्या च दशसाहस्रसंख्यया । तस्मिन्विमाने ऋषयः सर्वे राजर्षयस्तथा ॥ ४ ॥
ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः समाजग्मुः सहस्रशः । चरमाध्वरमवं द्रष्टुं रामस्योत्सवमागताः ॥ ५ ॥
वाल्मीकिरपि संगृह्य गायंतौ भूमिजात्मजौ । जगाम यज्ञवाटस्य समीप सीतया सुखम् ॥ ६ ॥
मार्गे नृपसमूहेषु शिबिकास्थां हि जानकीम् । न विदुः पार्थिवाः सर्वे जनास्तेऽपि यथेतरे ॥ ७ ॥
सुमेधया जनकोऽपि ययौ रामाध्वरं प्रति । क्रोशद्वयांतरे पूर्वे यज्ञवाटान्मुनीश्वरः ॥ ८ ॥
कृत्वा पर्णकुटीं रम्यां ताभ्यां युक्तः स सीतया । वाल्मीकिर्गोपयामास पर्णकुट्यां विदेहजाम् ॥ ९ ॥
नृपसेनानिवासेषु जनकश्च सुमेधया । स्वसैन्येन ययौ तूष्णीं रामेणासौ निरीक्षितः ॥१०॥
वाल्मीकिरपि तौ प्राह न्यस्तालंकारमण्डितौ । जटाचीराजिनधरौ सीतापुत्रौ महाधियौ ॥११॥
यत्र तत्र च गायंतौ पुरे वीथिषु सर्वतः । रामस्याग्रे प्रगायेतां शुश्रूषुर्यदि राघवः ॥१२॥
आजन्मकांडात्कांडानि न गेयान्यत्र बालकौ । यदा करोम्यहं चाज्ञां गायेतां सकलं तदा ॥१३॥
न ग्राह्यं तद्युवाभ्यां स यदि किंचित्प्रदास्यति । इति तौ चोदितौ तत्र गायमानौ विचेरतुः ॥१४॥
तथोक्तं ऋषिणा पूर्वं तत्र तत्राभ्यगायताम् । तां तु सुश्राव काकुत्स्थः पूर्वचर्याकृतिं ततः ॥१५॥
अपूर्वपद्यवृत्तादिगेयैश्च समभिप्लुताम् । बालाभ्यां राघवः श्रुत्वा कौतूहलमुपेयिवान् ॥१६॥
अथ कर्मान्तरे रामः समाहूय मुनीश्वरान् । राज्ञश्चैव नरव्याघ्रः पण्डितांश्चैव नैगमान् ॥१७॥
पौराणिकाञ्छब्दविदो गणकांश्च चिकित्सकान् । नानाकौशल्यनिपुणांस्तथा वृद्धान् द्विजादिकान् ॥१८॥
यज्ञवाटे तु तान्पूज्य गायकौ संप्रवेशयत् । ते सर्वे हृष्टमनसो राजानो ब्राह्मणादयः ॥१९॥
रामं तौ दारकौ दृष्ट्वा विस्मिता निर्निमेषकाः । अवोचन्सर्व एवैते परस्परमथानयोः ॥२०॥
इमौ रामस्य सदृशौ विंबाद्बिंबमिवोदितौ । जटिलौ यदि न स्यातां न वल्कलधारिणौ ॥२१॥

अयोध्याके समीप आ पहुँचे ॥ ३ ॥ उस समय शत्रुघ्नके साथ दस हजार चतुरङ्गिणी सेना थी । इसके अतिरिक्त उस विमानमें कितने ही ऋषि, ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्यगण दूर-दूरसे रामचन्द्रके उस अन्तिम यज्ञको देखने आये थे ॥ ४ ॥ ५ ॥ वाल्मीकि भी लव-कुश तथा सीताको अपने साथ लेकर रामके यज्ञमण्डपकी ओर चल पड़े ॥ ६ ॥ रास्तेमें सीता पालकीमें बैठी थीं । अतएव वहाँ राजाओं तथा और लोगोंने नहीं जान पाया कि इसमें कौन हैं ॥ ७ ॥ जनक और सुमेधा भी यज्ञमण्डपको आ रहे थे । जब दो कोस बाकी रह गया, वहीं वाल्मीकीजी सबके साथ एक पर्णकुटीमें ठहर गये और उसी कुटियामें वाल्मीकि ऋषिने जानकीको छुपा दिया ॥ ८ ॥ ९ ॥ जनक अपनी पत्नी सुमेधा तथा सेनाके साथ-साथ रामके यज्ञमण्डपमें जाकर ठहर गये । वहाँ रामसे भेंट हुई ॥ १० ॥ वाल्मीकिने उन दोनों कुमारोंका राजसी वस्त्राभूषण उतार तथा जटा और अचला पहिनाकर कहा कि तुम लोग इधर-उधर गलियोंमें मेरे सिखाये रामचरित्रको गाओ । यदि रामचन्द्र स्वयं सुनना चाहें तो उनको भी सुना देना ॥ ११ ॥ १२ ॥ लेकिन रामके सामने पूरी रामायण तभी गाना, जब मैं कहूँ । रामके जन्मसे लेकर सीतात्याग पर्यन्तकी कथा बिल्कुल अभ्यस्त रखखो । यदि राम तुम्हें कुछ देना चाहें तो लेनेसे इनकार कर देना । इस प्रकार वाल्मीकिजीके आज्ञानुसार वे दोनों बच्चे रामचरित्र गाते हुए घूमने लगे ॥ १३ ॥ १४ ॥ जहाँ-जहाँ और जिस-जिस प्रकार गुरुजीने जाकर गानेको कहा था, वहाँ-वहाँ जाकर उन्होंने गाया । रामचन्द्रजीके पास भी यह खबर पहुँची और उन्होंने लोगोंसे उनके गायनकी प्रशंसा सुनी ॥ १५ ॥ छोटे-छोटे बच्चोंके मुखसे इस प्रकार रामचरित्रके गानकी बात सुनकर उनके हृदयमें बड़ा कौतूहल हुआ ॥ १६ ॥ बादमें जब रामचन्द्रने अपने यज्ञसम्बन्धी कार्योंसे अवकाश पाया । तब अनेक मुनियों, राजाओं, ब्राह्मणों, वैदिकों, पौराणिकों, वैयाकरणों, ज्योतिषियों तथा अनेक प्रकारकी कलाओंमें निपुण लोगोंको उसी यज्ञशालामें बुलवाया । वहाँ पहुँचनेपर रामने सबकी पूजा की और उन दोनों कुमारोंको बुलवाया । उन राजाओं और ब्राह्मणादिकोंने बच्चोंको बड़े प्रेमसे देखा ॥ १७-१९ ॥ वहाँ लोगोंने एक बार रामको ओर देखा, फिर बच्चोंकी तरफ निहारा तो उनके आश्चर्यका ठिकाना नहीं रहा । उनकी आँखें निर्निमेष हो गयीं

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

विशेषं नाधिगच्छामो राघवस्यानयोस्तदा । एवं संवदतां तेषां विस्मितानां परस्परम् ॥२२॥
तदाऽऽह रामदूतोऽपि लवबाणरुजं स्मरन् । रामचंद्रं यज्ञवाटस्थितं वै संभ्रमेण हि ॥२३॥
लवमंगुलिना वीरं दर्शयंश्च मुहुर्मुहुः । राम राम महाबाहो तमेनं पश्य वै लवम् ॥२४॥
येनास्माकं शरौघैश्च प्रक्षिप्य तव सन्निधौ । नीतानि कनकाब्जानि सुगंधीनि निरंतरम् ॥२५॥
सीतात्यागनिमित्तेन येन तेनापि वा मुहुः । कृता निंदा गर्वितेन त्वद्दण्डैकार्थिना प्रभो ॥२६॥
तव दण्डभयादेव पूर्ववेषं विलोपितः । रथवस्त्राभरणानि शस्त्राण्यपि विहाय च ॥२७॥
धृतानि वल्कलादीनि दीनरूपोऽत्र दृश्यते । त्वयाऽद्य दण्डनीयोऽयं बंधुसारातिगर्वितः ॥२८॥
इति स्वदूतवाक्यानि शृण्वन्नपि रघूत्तमः । प्रेम्णाऽवलोकयामास सुधाक्षिभ्यां शिशू मुहुः ॥२९॥
बालावपि सभासंस्थान्नमस्कृत्य यथाक्रमम् । राघवं स्वपितृव्यांश्च वसिष्ठं प्रणिपत्य च ॥३०॥
उपाचक्रमतुर्गातुं वीणे रणयतः शुभे । ततः प्रवृत्तं मधुरं गांधर्वं गीतमुत्तमम् ॥३१॥
श्रुत्वा तन्मधुरं गीतं रामस्तोषमवाप ह । ताभ्यां श्रुतं स्वचरितं विलासावध्यनुक्रमात् ॥३२॥
यद्यदाचरितं पूर्वं सीतया सह सौख्यदम् । ततोऽपराह्णे श्रीरामः प्रसन्नवदनांबुजः ॥३३॥
उवाच तौ समग्रं वै श्वो गेयं मम सन्निधौ । तथेति रामवचनं तावंगीचक्रतुस्तदा ॥३४॥
ततो रामो लवं प्राह मे यद्यप्यपराधितम् । त्वया पूर्वं तथापि त्वां तुष्टोऽहं नात्र शिक्षये ॥३५॥
त्वद्गीतिमच्चरित्रादि श्रवणादद्य मे मनः । परां विश्रांतिमापन्नं त्वत्कृतं क्षमितं मया ॥३६॥
अधुना मद्भयं त्यक्त्वा त्वं सुखं विचरात्र हि । तद्रामवचनं श्रुत्वा लवो राघवमब्रवीत् ॥३७॥
मयाऽपराधितं राजंस्तव दर्शनकाम्यया । मदपराधितं स्मृत्वात्राहूतोऽहं यतस्त्वया ॥३८॥

और वे आपसमें कहने लगे—२० ॥ एक बिंबसे निकले दूसरे प्रतिबिंबकी भाँति ये दोनों बालक बिल्कुल रामचन्द्रके समान हैं। यदि इनके मस्तकपर जटा न रहे और वल्कल वस्त्र उतार दिये जायँ तो इनमें तथा राममें कोई अन्तर ही नहीं रह जाता। जब सब लोग विस्मित होकर परस्पर इस प्रकार बातें कर रहे थे। तभी लवके बाणोंसे बगीचेवाली मारकी पीड़ाका स्मरण करता हुआ रामका एक दूत घबड़ाकर बोला—॥ २१-२३ ॥ हे राम ! हे महाबाहो ! देखिए, यही लव है । जिसने अपने बाणोंसे उठाकर मुझे आपके पास फेंक दिया था और सुगन्धित कनककमलके फूलोंको हठात् तोड़कर ले जाया करता था ॥ २४॥ २५॥ आपके सीतात्यागविषयक बातको लेकर इसीने बड़े घमण्डके साथ आपकी निन्दा की थी ॥२६॥ ज्ञात होता है कि आपके दण्डसे डरकर इसने रथ तथा वस्त्राभरण त्याग दिये हैं और बल्कलवसन आदि पहन तथा दीनरूप धारण करके आया है। किन्तु मेरा यह परामर्श है कि इस अभिमानीको अवश्य दण्ड दीजिए ॥ २७ । २८ ॥ इस प्रकार दूतकी बातें सुन करके भी रामचन्द्र अपनी अमृतभरी आँखोंसे उन बच्चोंको प्रेमपूर्वक देख रहे थे ॥ २९ ॥ लड़कोंने सभामें पहुँचकर वहाँ बैठे हुए लोगोंको प्रणाम करके रामको, लक्ष्मण आदि अपने चाचाओंको तथा वसिष्ठ आदि गुरुजनोंको प्रणाम किया और वीणा बजाते हुए रामचरित्र गाने लगे। उस समय सभामें जैसे गान्धर्व गायनका रस बरसने लगा ॥ ३० ॥ ३१ ॥ राम उनका मधुर गायन सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। गायनमें रामके उस चरित्रका वर्णन था, जो जन्मसे लेकर विलासकाण्ड पर्यन्त सीताके साथ उन्होंने किया था ॥ ३२ ॥ गाते-गाते दोपहरका समय हो गया। तब रामचन्द्रने प्रसन्नतापूर्वक उन बच्चोंसे कहा—अच्छा, आज समय अधिक बीत चुका। इसलिये रहने दो। कल मेरे पास फिर आना और मुझे सारी रामायण सुनाना। रामकी बातको उन्होंने अङ्गीकार कर लिया ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ इसके अनन्तर रामने लवसे कहा—यद्यपि तुम हमारे अपराधी हो, फिर भी मैं तुमपर प्रसन्न हूँ। तुम्हें कोई दण्ड देनेकी इच्छा ही नहीं होती। तुम्हारे गायनोंमें अपनी चरित्रावली सुनकर मेरा हृदय शान्त हो गया है और तुमने जो अपराध किया था, उसे क्षमा करता हूँ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ अब तुम मुझसे डरो नहीं, निर्भय होकर जहाँ चाहो घूमो। इस प्रकार रामकी बातें सुनकर लवने उत्तर दिया—राजन् ! उस समय

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

अद्य ते दर्शनेनैव पौरुषं वृद्धिमागतम् । कीर्तिर्मे महती जाता तवाग्रे गायनादपि ॥३९॥
इत्युक्त्वाऽऽसीच्छ्त्रस्तूष्णीं बन्धुना गंतुमुद्यतः । सभायास्तौ गंतुकामौ स्थलं स्वीयं निरीक्ष्य च ॥४०॥
रामोऽयुतं वसु तयोर्भरतेन प्रदापयत् । दीयमानं सुवर्णं तौ न तज्जगृहतुस्तदा ॥४१॥
राजन् हेम्ना किमेतेन ह्यावां वै वन्यभोजिनौ । कृपावलोकनेनैव पाहि त्वमावयोः सदा ॥४२॥
इति संत्यज्य तद्वित्तं जग्मतुर्मुनिसन्निधिम् । आसीच्छ्रुत्वा स्वचरितं रामो ह्यतिविस्मितः ॥४३॥
कुशोऽपि सकलं वृत्तं वाल्मीकिं मातरं तथा । निवेद्य जाह्नवीं स्नातुं कौतुकेन ययौ सुखम् ॥४४॥
लवो मुनीनां शिशुभिः शिशुक्रीडनमाचरत् । एतस्मिन्नंतरे यत्र लवः क्रीडां चकार ह ॥४५॥
बालकैस्तत्र संप्राप्तास्तुरगाध्वरकारिणः । त्यक्त्वा क्रीडां लवः शीघ्रमश्वं धृत्वोटजांतिके ॥४६॥
वृक्षे बबंध शिशुभिः पूर्ववत् क्रीडनं व्यधात् । ततः खे पुष्पकं प्राप्तं दृष्ट्वा बद्धं तुरङ्गमम् ॥४७॥
ज्ञात्वा बालकृतं सर्वे शत्रुघ्नाद्या विहस्य ते । दूतानाज्ञापयामासुर्मुच्यतां तुरगः सुखम् ॥४८॥
लवस्तानागतान् दृष्ट्वा वायव्यास्त्रेण वै तृणम् । संमन्त्र्य तान् मुमोचाथ लीलया शिशुसंयुतः ॥४९॥
झझावातैस्तदा यानं हस्त्यश्वरथपूरितम् । शत्रुघ्नेनापि तैर्दूतैः खेऽभूत्तद्भ्रमरोपमम् ॥५०॥
तच्छ्रुत्वा रामचन्द्रोऽपि प्रेषयामास सादरम् । सुग्रीवमङ्गदं नीलं मैन्दं जाम्बवतं नलम् ॥५१॥
सुमंत्रं भरतं वायुपुत्रं ताक्ष्यं विभीषणम् । सुषेणं पार्थिवान्सर्वान् स्वस्वामितबलैर्युतान् ॥५२॥
द्विविदं दधिवक्त्रं च वानरान्मकरध्वजम् । ते लवं दुद्रुवुर्गर्वाद्युद्धं चक्रुस्त्वरान्विताः ॥५३॥
तानागतान् लवो दृष्ट्वा कस्यचित्पतितं भुवि । दूतस्याश्वमोचनार्थमागतस्य शरासनम् ॥५४॥
तूणीरं च स्वयं धृत्वा ययौ योद्धुं त्वरान्वितः । टणत्कृत्य महच्चापं चिंतयामास चेतसि ॥५५॥

मैंने जो अपराध किया था, उसका उद्देश्य एकमात्र यही था कि मैं किसी प्रकार आपसे मिलूँ। आपने भी मेरे अपराधका स्मरण करके भी मुझे बुलाया, सो बड़ी कृपा की ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ आज आपके दर्शन करते ही मेरा पुरुषार्थ बढ़ गया और आपके सामने रामचरित्र गानेसे मेरी कीर्ति भी बढ़ी ॥ ३९ ॥ इतना कहकर लव चुप हो गये और अपने भ्राताके साथ आश्रमको जानेकी तैयारी करने लगे। उधर रामने उन बच्चोंके लिए दस हजार स्वर्णमुद्रायें भरतसे दिलवायीं। किन्तु उन्होंने वह धन नहीं लिया। उन्होंने कहा–राजन्! अरण्यमें फलमूलपर जीवन बितानेवाले हम वनवासी लोग आपकी इस सुवर्णराशिको लेकर क्या करेंगे। बस, आप अपनी कृपादृष्टिसे हमारी रक्षा करते रहिए ॥ ४०–४२ ॥ इस प्रकार उस दानद्रव्यका परित्याग करके वे दोनों वाल्मीकिजीके पास चले गये। बच्चोंके मुँहसे अपना चरित्र सुनकर रामचन्द्रजी बड़े विस्मित हुए ॥ ४३ ॥ उधर कुश आश्रमपर पहुँचे तो वहाँ वाल्मीकि तथा सीताको उस दिनका वृत्तान्त सुनाया और स्नान करनेके लिए गंगाजीको चले गये ॥ ४४ ॥ इधर लव कुछ मुनिकुमारोंके साथ खेलने लगा। इसी बीच जहाँ वे सब खेलते रहे, उसी तरफसे अश्वमेधका घोड़ा चारों ओर घूमकर रामकी यज्ञशालामें जा रहा था। उसे देखते ही कौतुकवश लड़कोंने घेर लिया। लवने आगे बढ़कर घोड़ेको पकड़ा और अपनी कुटियाके किनारे ले जाकर एक वृक्षमें बाँध दिया ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ लड़के फिर खेलने लगे। उसी समय आकाशमें पुष्पक विमानपर बैठे हुए शत्रुघ्नने देखा तो बहुत हँसे। उन्होंने सोचा कि यह बच्चोंने खेलवाड़ किया है। शत्रुघ्नने दूतोंसे कहा-जाओ और घोड़ेको वहाँसे छीन ले आओ। दूत लवके पास पहुँचे। त्यों ही लवने एक तिनका उठाया और वायव्य मन्त्रसे अभिमन्त्रित करके उनपर डाल दिया। उसके डालते ही बड़ी जोरसे आँधी चलने लगी और शत्रुघ्न तथा उनके सैनिक हाथी, घोड़े, रथ आदि आकाशमें भौंरोंकी तरह उड़ने लगे ॥ ४७–५० ॥ यह समाचार सुनकर रामने अपने यहाँसे सुग्रीव, अङ्गद, नील, जांबवान्, नल, सुमन्त्र, भरत, हनुमान्, गरुड़, विभीषण, सुषेण तथा देश-देशान्तरसे आये हुए राजाओंको शत्रुघ्नकी सहायताके लिए भेजा। इनके अतिरिक्त द्विविद-दधिवक्त्र आदि वानर तथा मकरध्वज आदि वीर गर्वके साथ युद्धभूमिकी ओर दौड़ पड़े ॥ ५१–५३ ॥ इतनी बड़ी सेनाको सामने देखकर लवने एक साधारण धनुषको, जो घोड़ा छुड़ानेके लिए आये हुए किसी सैनिकका गिर पड़ा था,

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

पितृव्याद्याः स्थिता योद्धुं मयाऽद्य पुरतस्त्विह । कथमेभिश्च योद्धव्यं मया च समरांगणे ॥५६॥
कथं तीक्ष्णानद्य शरानेतेषु प्रक्षिपाम्यहम् । स्वीयानां वधकर्तारं मां मातागुरुनिराघवाः ॥५७॥
सहिष्यंति कथं दृष्ट्वा कर्त्तव्यं किं मयाऽधुना । युद्धात्पराङ्मुखोऽहं चेद्गत्वा गच्छामि तं गुरुम्॥५८॥
वाल्मीकिशिक्षिता विद्या तर्हि सा निष्फला भवेत्। अतः केषामपि वधं विना युद्धं करोम्यहम् ॥५९॥
इति निश्चित्य मनसि मेघशब्दवदाह तान् । आगम्यते किमर्थं मां युष्माभिर्ब्रूत वेगतः ॥६०॥
न सीतावत्सुलभोऽहं पीडनार्थमिहाद्य हि । सीताक्लेशानलहरं मां मेघं वेत्थ भो खलाः ॥६१॥

सीतोष्णोच्छ्वसितोग्राग्निज्वालाभिर्वोऽद्य पौरुषम् ।
विदग्धं न स्फुटं लोकान्दर्शनीयं ममापि च ॥ ६२ ॥

इति स्ववाक्शरैर्भिन्नहृदयान्स लवः पुनः । मोहयामास सकलान् मोहनास्त्रं विसृज्य च ॥६३॥
ततो लवः स विजयी सुमंत्रं भरतं तथा । कृत्वा स्वकक्षयोः शीघ्रं कराभ्यां वायुनंदनम् ॥६४॥
सुग्रीवं च मुदा धृत्वा सीतायै तान् प्रदर्शयत् । दृष्ट्वा सीतापि तान् वीरान् मोहनास्त्रेण मोहितान्॥६५॥
पुत्रात्तान् मोचयामास रक्षयामास तान् रहः । तान्नीतान्राघवः श्रुत्वा लक्ष्मणं वाक्यमब्रवीत् ॥६६॥
ईदृशं पौरुषं बंधो रावणेनापि नो कृतम् । यथा कृतं बालकेन करणीयं किमत्र वै ॥६७॥
तद्रामवचनं श्रुत्वा लक्ष्मणः प्राह राघवम् । मा चिंतेयं त्वया कार्या धृत्वाहं तं शिशुं क्षणात् ॥६८॥
त्वत्सन्निधावानयामि सिंहो मृगशिशुं यथा । इत्युक्त्वा राघवं नत्वा रथारूढो ययौ जवात् ॥६९॥
सेनया सचिवैर्युक्तो वाल्मीकेर्वसतिस्थलम् । तमागतं विबुध्याथ लवोऽपि तत्पुरो ययौ ॥७०॥
तं दृष्ट्वा बालकं रम्यं कृपया लक्ष्मणोऽब्रवीत् । मा शिशो त्वं कुरुष्वाद्य साहसं मत्पुरस्त्विह ॥७१॥

उसको हाथमें लिया । पीठपर तरकस बाँधी और युद्ध करनेके लिए धनुषका भयानक टंकोर करके मनमें सोचने लगे—मेरे चाचा आदि युद्ध करनेके लिए सामने खड़े हैं । मैं समरभूमिमें इनके ऊपर अपने तीक्ष्ण बाण कैसे चलाऊँगा । स्वजनोंका वध करनेपर माता सीता तथा रामचन्द्रजी मेरे इस दुष्कर्मको भला कैसे सहेंगे । ऐसी अवस्थामें मैं क्या करूँ ? यदि युद्धसे मुहँ मोड़कर गुरु वाल्मीकिके पास लौट जाऊँ तो महर्षिकी सिखायी विद्या निष्फल हो जायगी । अतएव इस समय ऐसा युद्ध उपयोगी होगा, जिसमें किसीका वध न हो ॥ ५४-५९ ॥ ऐसा निश्चय करके मेघकी तरह गर्जते हुए लवने कहा– हे दुष्टों ! तुमलोग किसलिये मेरी ओर दौड़े चले आ रहे हो ? ॥ ६० ॥ माता सीताकी तरह मैं भोला-भाला नहीं हूँ, जो रामकी दी हुई पीड़ाको चुप चाप सह लूँगा । देख लो, सीताके क्लेशरूपी अग्निको बुझानेवाला मैं मेघ हूँ । सीताकी उष्ण उच्छ्वासकी उग्र ज्वालाके सामने आज तुम सबका पुरुषार्थ स्पष्टरूपसे संसारके सामने उपस्थित होगा और दुनिया देखेगी । इस प्रकार पहले लवने अपने वचनरूपी बाणोंसे शत्रुओंके हृदयपर प्रहार किया । तदनन्तर अपने मोहनास्त्रसे वहाँ उपस्थित सारी सेनाको मूर्छित कर दिया ॥ ६१-६३ ॥ इस तरह विजय प्राप्त करके लवने सुमन्त्र और भरतको अपनी कांखमें दबा लिया । हाथोंसे हनुमान्‌जी तथा सुग्रीवको पकड़कर प्रसन्नतापूर्वक माताके पास ले गये और सीताको दिखाया । उन वानरोंको मोहनास्त्रसे मोहित देखकर सीताने उन्हें लवके हाथोंसे छुड़ा दिया । उधर जब रामने यह सुना कि लव मोहनास्त्रसे सैनिकोंको मोहित करके सुग्रीवादिको पकड़ ले गया है । तब एकान्तमे लक्ष्मणसे कहने लगे— हे लक्ष्मण ! इस प्रकारका पुरुषार्थ तो रावण भी नहीं दिखा सका था, जैसा कि यहाँ वह छोकरा दिखा रहा है । इस विषयमें क्या करना चाहिये, यह मैं कुछ भी नहीं सोच सका हूँ । इस प्रकार रामकी बात सुनकर लक्ष्मणने कहा--आप कुछ चिन्ता न करें । मैं अभी आता हूँ और क्षणमात्र में उस बच्चेको बन्दी बनाकर आपके पास लाता हूँ ॥ ६४-६८ ॥ ऐसा कहकर लक्ष्मण रथपर बैठे और वेगके साथ चल दिये । एक बड़ी सेना और मन्त्रियोंके साथ लक्ष्मण थोड़ी ही देरमें आश्रमके पास जा पहुँचे । जब लवने सुना कि लक्ष्मण आये हैं तो वे स्वयं उनके सामने गये । लक्ष्मणने जब उस सुन्दर और सुकुमार किन्तु वीर

CC-0. In Public Domain. Kirtika Sharma Najafgarh Delhi Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

न समर्थोऽसि वै स्थातुं गच्छ नोचेन्मरिष्यसि । शेषं रामायणं श्रोतुं त्वत्तोऽहं त्वां निहन्मि न ॥७२॥
त्वयाऽपराधितं बाल राघवस्य मुहुर्मुहुः । तत्सर्वमप्यहं वेद्मि तथापि त्वा निहन्मि न ॥७३॥
नीतान् वीरान् समर्प्याथ वाजिना रघुनंदनम् । एहि त्वं शरणं बाल यद्यस्ति जीवितस्पृहा ॥७४॥
तत्सौमित्रेर्वचः श्रुत्वा लवोऽभीतस्तमब्रवीत् । वेद्मि त्वां राघवं चापि सीतात्यागाप्तपौरुषम् ॥७५॥
सीतायामेव युवयोः पौरुषं न लवे मयि । सीतादुःखापनोदार्थं मुनिना निर्मितस्त्वहम् ॥७६॥
युवां जित्वाऽद्य समरे सीतादुःखं प्रमार्जये । मुधा युवाभ्यां सा सीता छलितापि पतिव्रता ॥७७॥
तस्या विनिष्कृतिं चाहं कर्तुमत्र समागतः । सीतादुःखाग्निना युष्मत्पौरुषं दग्धमस्ति तत् ॥७८॥
न स्थातव्यं ममाग्रेऽत्र गच्छध्वं विधवोपमाः । इति ते लववाग्बाणैर्भिन्नमर्मस्थलाश्च वै ॥७९॥
लक्ष्मणाद्या ववर्षुस्तं शस्त्रैरस्त्रैर्लवं क्रुधा । ततो लवश्च स्वैर्बाणैः शस्त्रवृष्टिं निवार्य च ॥८०॥
श्रीरामसचिवादींश्च प्राक्षिपद्यज्ञमण्डपे । ते सर्वे सचिवाद्याश्च लवमार्गणताडिताः ॥८१॥
भिन्नदेहा लोहिताक्ताः प्रोचू रामं स्खलिद्गिरा । राम त्वं नो पश्यसि किं तूष्णीमध्वरमण्डपे ॥८२॥
उपायं चिंतयस्वान्यं वधे तस्य लवस्य च । शस्त्रैरस्त्रैर्मृतिं युद्धे न गच्छति लवः प्रभो ॥८३॥
साहाय्य कुरु सौमित्रेर्यदि बन्धुं सजीवितम् । त्वमिच्छसि लवशरप्रहाराद्बन्धुवत्सल ॥८४॥
इत्युक्त्वा लववाक्यानि राघवं ते न्यवेदयन् । तानि श्रुत्वा राघवोऽपि तूष्णीमासीत्तदा क्षणम् । ८५॥
लवोऽपि लक्ष्मणं बाणैर्विव्याध दशभिर्दृढम् । आपुंखमग्नास्ते बाणाः शरीरे लक्ष्मणस्य च ॥८६॥
ततः क्रोधपरीतात्मा लक्ष्मणो वेगवत्तरः । लवदेहे स्वशस्त्राणि भवन्ति विफलानि हि ॥८७॥

बालकको सामने देखा तो कृपापूर्वक कहने लगे—देखो बच्चे ! अब मैं आया हूँ। मेरे सामने किसी तरहकी दुष्टता न करना। तुम मेरे सामने नहीं ठहर सकते। जाओ, चले जाओ, नहीं तो तुम नहीं बच सकोगे। अभी हमें तुम्हारे मुखसे बाकी रामचरित्र सुनना है। इसीलिए नहीं मार रहा हूँ। हे अबोध बालक ! तुमने कई बार रामका अपराध किया है। मैं सब जानता हूँ। फिर भी मैं तुमको नहीं मारूँगा ॥ ६९–७३ ॥ यदि तुम्हें अपने प्राणोंका लोभ हो तो तुमने जिन लोगोंको पकड़ लिया है, उन्हें लाकर हमें दे दो और घोड़े-को लेकर मेरे साथ रामचन्द्रजीको शरणमें चलो ॥ ७४ ॥ इस तरह लक्ष्मणकी बातें सुनकर लवने कहा—बेचारी सीताके ऊपर अपनी वीरता दिखलानेवाले तुमको और रामको मैं अच्छी तरह जानता हूँ। सीताके ऊपर तुम्हारा जो पुरुषार्थ चला था, वह लवपर नहीं चल सकेगा। सीताके दुःखको दूर करनेके लिए ही महर्षि वाल्मीकिने मेरी रचना की है ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ आज मैं तुम दोनोंको जीतकर सीताका दुःख दूर करूँगा। तुमने भोली-भाली सीताके साथ कपटका व्यवहार किया है। उसका प्रतीकार करनेके लिए ही मैं यहाँ आया हूँ। सीताके दुःखरूपी अग्निमें तुमलोगोंका पुरुषार्थ जल चुका है ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ तुम लोगोंको चाहिए कि मेरे सामनेसे हट जाओ। इस प्रकार लवके वचनरूपी बाणोंसे लक्ष्मणका हृदय विदीर्ण हो गया ॥ ७९ ॥ ८० ॥ अतः क्रुद्ध होकर सब एक साथ लवपर बाणवर्षा करने लगे। लवने भी अस्त्रोंसे उनके शस्त्रोंका निवारण किया और लक्ष्मणके साथ आये हुए मन्त्री-सैनिक आदिको अपने बाणोंसे उठा-उठाकर रामके यज्ञमण्डपमें फेंक दिया। लवके बाणोंसे आहत मन्त्री आदिकी देहमें जहाँ-तहाँ घाव हो गये थे और उनसे रुधिर बह रहा था। इसी दशामें वे सब रामके पास जाकर कहने लगे—हे राम ! इस यज्ञमण्डमें चुपचाप बैठे-बैठे आप क्या देख रहे हैं ? ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ लवको मारनेके लिए कोई दूसरा उपाय सोचिये। हे प्रभो ! लव संग्राममें किसी तरहके अस्त्र-शस्त्रसे नहीं मर रहा है। हे बन्धुवत्सल ! यदि लक्ष्मणको जीवित देखना चाहते हों तो उनकी सहायता करिये। लवके कराल बाणोंके प्रहारसे उन्हें बचाइए। इस तरह वहाँका समाचार सुनानेके बाद उन बातोंको बतलाया, जो लवने रामके विषयमें कही थीं। उनकी बातें सुनकर राम कुछ देरतक चुप बैठे रहे। उधर लवने दस बाणोंसे लक्ष्मणको घायल कर दिया और वे दसों बाण लक्ष्मणके शरीरमें सिरसे लेकर पूँछतक घुस गये थे ॥ ८३–८६ ॥ ऐसी अवस्थामें लक्ष्मण क्रोधसे आग-

CC0. In Public Domain. Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

दृष्ट्वेति व्यग्रचित्तः सः क्षणं सञ्चिन्त्य वै हृदि । ब्रह्मास्त्रेण लवं बद्ध्वा साश्वं राज्ञे न्यवेदयत् ॥८८॥
ब्रह्मास्त्रं मानयंस्तूष्णीं ययौ राम लवोऽपि सः । राघवस्तं समानीतं दृष्ट्वा लक्ष्मणमब्रवीत् ॥८९॥
जानन्नपि सुतं स्वीयं कौतुकं दर्शयञ्जनान् । महत्कार्यं कृतं बन्धो त्वमेनं विद्धि बाहुजम् ॥९०॥
द्विजहत्याभयं त्यक्त्वा घातयस्वैनमद्य हि । रामं प्रोवाच सौमित्रिर्नायं शस्त्रैर्मरिष्यति ॥९१॥
भरताद्यैर्मया चापि नायं किं ताडितोऽसिभिः । अस्य देहे क्षतं चैकमपि किं दृश्यते त्वया ॥९२॥
तच्छ्रुत्वा राघवः प्राह प्रष्टव्यो बालकस्त्वया । केनोपायेन ते मृत्युर्भवेदिति समाग्रतः ॥९३॥
गोपायन्ति निजं मृत्युं न शूरा वधशङ्कया । न वदन्त्यनृतं क्वापि स्वबलेनैव जीविताः ॥९४॥
ततः पृष्टो लक्ष्मणेन लवः प्राहाथ लक्ष्मणम् । जलस्य सेचनाद्वृद्धिं स्वीयां ज्ञात्वा मुनेर्गिरा ॥९५॥
कापट्यबुद्ध्या लोकान्हि दर्शयन् स्वपराक्रमम् । जलस्य सेचनेनाद्य मृत्युर्मे निश्चितो भवेत् ॥९६॥
तत्तस्य वचनं श्रुत्वा शिलायां तं निवेश्य च । सेचनं तोयकलशैः कारयामास लक्ष्मणः ॥
अयोध्यावासिभिर्नारीपुरुषैः परमादरात् ॥९७॥
चतुर्मुखैश्च घटैर्वृषानीतैश्च कोटिशः । तथा कार्पटिकैश्चापि रथोष्ट्रवारणादिभिः ॥९८॥
आनयित्वा जलं शीघ्रं सिषेच लवबालकम् । यथा यथा जलैस्तं हि सेचनं चक्रिरे जनाः ॥९९॥
तथा तथा लवस्तत्र व्यवर्द्धत घनो यथा । सप्ततालप्रमाणोऽभूद्वृद्ध्या भीमपराक्रमः ॥१००॥
ततस्तं लक्ष्मणः प्राह त्वया लव मृषेरितम् । नायं तव वधोपायः स्ववृद्ध्यर्थं कृतः खलु ॥१०१॥
लवोऽप्याहाथ सौमित्रं कौटिल्येन प्रतारयन् । यथा तैलक्षते दीपो वृद्धिमंते प्रगच्छति ॥१०२॥
तथायुषः क्षये मेऽपि वृद्धिं पश्य क्षणं त्विमाम् । तद्वाक्य मानयन्सत्यं सेचयत्तं स लक्ष्मणः ॥१०३॥
जलैर्गांगैः समानीतैः पूर्ववच्च पुनः पुनः । काष्ठसोपानमार्गेण सेचनं चक्रिरे जनाः ॥१०४॥

बबूले हो उठे। उन्होंने कई शस्त्र लवपर चलाये, लेकिन जब उन्हें बेकार होते देखा तो घबड़ा उठे। क्षण भर उन्होंने न जाने क्या सोचा और तब ब्रह्मास्त्रसे लवको बांध लिया और घोड़ेको भी साथ लेकर अयोध्यामें रामके पास ले आये ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ब्रह्मास्त्रकी मर्यादा रखनेके लिए लव भी चुपचाप लक्ष्मणके साथ चले गये। जब रामने लवको देखा तो लक्ष्मणसे कहा—यद्यपि मैं जानता हूँ कि यह मेरा ही पुत्र है। फिर भी संसारको शिक्षा देनेके लिये मैं आज्ञा देता हूँ कि द्विजहत्याके भयको दूर करके आज ही इसे मार डालो। इसने बड़े अपराध किये हैं। लक्ष्मणने उत्तर दिया कि यह किसी शस्त्रास्त्रसे नहीं मरेगा ॥ ८९-९१ ॥ हमने तथा भरतजीने इसपर कितनी ही बार तलवारके प्रहार किये हैं, किन्तु देखिए न ! इसके शरीरमें कहीं कोई घाव दीखता है ? ॥ ९२ ॥ रामने कहा—इसीसे पूछो कि तू किस प्रकार मर सकेगा। जो सच्चे शूरवीर होते हैं, वे अपनी मृत्युके उपायको भा नहीं छिपाते। सच्चे वीर कभी झूठ नहीं बोलते ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ इस प्रकार पूछनेपर लव कुछ सोचने लगे। एक बार महर्षि वाल्मीकिने लवसे कहा था कि तुम्हारे ऊपर जितना जल डाला जायगा, तुम उतने ही बढ़ोगे। इसी बातका ख्याल करके लवने संसारको अपना पराक्रम दिखानेके लिए लक्ष्मणसे कहा—जलसे सींचनेपर मेरी मृत्यु होगी ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ लवकी बात सुनकर लक्ष्मणने लवको पास ही एक पत्थरपर बिठाया और पानीके घड़ोसे नहलाने लगे। अयोध्यानिवासी बहुतसे नरनारी बड़े आदरके साथ लवपर जल डालने लगे। चार मुँहवाले बड़े-बड़े चमड़ेके मोट बैल, रथ, हाथी, घोड़े, और ऊँटपर लद-लदकर करोड़ोंकी संख्यामें वहाँ आने लगे और वे सब लवके ऊपर डाल दिये गये। जैसे-जैसे पानी पड़ता था, त्यों त्यों लव मेघके समान बढ़ते जाते थे। वह परम वीर बढ़ते-बढ़ते जब सात ताड़की ऊँचाई तक बढ़ा ॥ ९७-१०० ॥ तब लक्ष्मणने कहा—लव ! ज्ञात होता है कि तुम झूठ बोले हो। तुमने मरनेके लिये नहीं, अपने बढ़नेका उपाय बताया था ॥ १०१ ॥ लवने भी लक्ष्मणको बहकाकर कहा—दीपक जब बुझनेवाला होता है तो उसकी लौ कितनी बढ़ जाया करती है। उसी तरह आयुके क्षय होनेसे मैं भी बढ़ रहा हूँ। अबकी बार भी लक्ष्मणने लवकी बात सच मानी और उसी तरह लवके ऊपर जलके कलसे डालते रहे ॥१०२॥१०३॥ गङ्गाजीसे

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

ब्रह्मास्त्रेण विनिर्मुक्तः प्रचचाल लवस्तदा । भुजावास्फालयामास तथोरू बाललीलया ॥१०५॥
तं दृष्ट्वा दुद्रुवुः सर्वे त्यक्त्वा तोयघटानपि । शकृन्मूत्रं प्रमुंचंतो मुक्तकच्छा लवेक्षणाः ॥१०६॥
एतस्मिन्नन्तरे क्रीडन् गंगायां तान् जनान्कुशः । पप्रच्छाद्य मुहुर्नीरं किमर्थं नीयते जवात् ॥१०७॥
जनाः प्रोचुर्लवं हंतुमस्माभिर्नीयते जलम् । विश्वस्तैर्लववाक्येन तच्छ्रुत्वा स ययौ कुशः ॥१०८॥
संगृह्य स्वाश्रमाच्चापं तूणीरं वेगवत्तरः । लवं मोचयितुं चापं टणत्कृत्वाऽध्वरस्थले ॥१०९॥
कुशचापध्वनिं श्रुत्वा तस्थौ तूष्णीं लवः क्षणम् । ततो दृष्ट्वा कुशं प्राप्तं ययौ योद्धुं स लक्ष्मणः ॥११०॥
तं दृष्ट्वा स कुशः प्राह छलितौ जानकीलवौ । त्वया रामेण लोकैश्च तयोः कर्तुं विनिष्कृतिम् ॥१११॥

अहं प्राप्तोऽस्मि मां बालं लववत्त्वं न मानय ।
युवयोः पौरुषं नार्यां शिशावस्तीति वेद्म्यम् ॥११२॥

सीताक्लेशानलज्वालासंदग्धं युवयोर्बलम् । न ममाग्रे स्फुटं कार्यं युवाभ्यामुपहासकृत् ॥११३॥
वाल्मीकिशिक्षितां विद्यां रामं त्वामद्य दर्शये । इत्युक्त्वा तुमुलं युद्धं पितृव्येण चकार सः ॥११४॥
आसन् वृथा जानकीये लक्ष्मणोत्सृष्टमार्गणाः । रामायणात्कुशो ज्ञात्वा शेष एवात्र लक्ष्मणः ॥११५॥
जातोऽस्तीति वधे तस्य गारुडास्त्रं मुमोच सः । क्षात्रधर्मं पुरस्कृत्य न तद्धिंसाभयं दधे ॥११६॥
जानन् युद्धे पितुर्हत्या जाता चेन्न भयं त्विति । तद्दृष्ट्वा खगराजास्त्रं सौमित्रेः कुंठिता मतिः ॥११७॥
भयभीतः पृथिव्यां हि पपात लक्ष्मणो रथात् । च्युतं दृष्ट्वा स्वयं तत्र दीक्षायुक्तोऽपि वेगतः ॥११८॥
धृत्वा चापं च तूणीरं यज्ञकुण्डाग्रतः स्थितः । चापं संधाय ब्रह्माणं सौमित्रेर्जीविताशया ॥११९॥

जल भर-भरकर आता जा रहा था और सीढ़ी लगाकर लवपर जलकी धार डाली जाती थी ॥ १०४ ॥ उसी समय सबके देखते ही देखते लव ब्रह्मास्त्रसे छूट गया और भुजाएँ तथा ताल ठोंकता हुआ दौड़ने लगा। उसको देखकर वहाँके सारे नर-नारी अपने-अपने कलसोंको छोड़-छोड़कर भाग गये। उसके उस विकराल रूपको देखकर बहुतोंकी धोतियाँ खुल गयीं। कई एकको तो मारे डरके पेशाब टट्टी तक हो गयी ॥ १०५ ॥ १०६ ॥ उधर कुश बच्चोंकी तरह खेलता-कूदता गङ्गाजीके किनारे गया। वहाँ उसने देखा कि बहुतसे लोग पानी भर रहे हैं। उनसे कुशने पूछा—तुमलोग इतना पानी क्यों भरे लिये जा रहे हो ? ॥ १०७ ॥ उन्होंने कहा—लवको मारनेके लिए। यह सुनकर कुश अपने आश्रमपर गया और धनुष-बाण लेकर लवको छुड़ानेके लिए रामकी यज्ञशालाके समीप जा पहुँचा और धनुषका भीषण टंकोर किया ॥ १०८ ॥ १०९ ॥ कुशके धनुषकी टंकोर सुनकर लव कुछ देरके लिए शान्त खड़ा हो गया और कुशसे युद्ध करनेके लिए लक्ष्मणके सामने जा पहुँचे ॥ ११० ॥ लक्ष्मणको देखकर कुशने कहा—तुमने और रामने लव तथा सीताके साथ बड़ा छल किया है। उसीका बदला लेनेके लिए मैं आया हूँ। मुझको लवकी तरह साधारण बालक न समझना। तुम लोगोंकी वीरता स्त्री और छोटे-छोटे बच्चोंपर ही चल सकती है, यह मैं जानता हूँ। सीताके क्लेशरूपी धधकती अग्निमें तुम्हारा बल जल चुका है। अब अपना उपहास करानेके लिए मेरे सामने लड़नेको व्यर्थ आये हो। अच्छा, यदि तुम्हारी यही इच्छा है तो वाल्मीकिकी सिखायी विद्या आज मैं तुम्हें और रामको दिखाता हूँ। ऐसा कहकर कुशने लक्ष्मणके साथ तुमुल युद्ध प्रारम्भ कर दिया ॥ १११–११४ ॥ लक्ष्मणने कुशपर जितने बाण चलाये, वे सब व्यर्थ गये। रामायणकी भविष्यवाणीसे कुशको ज्ञात हो चुका था कि अब लक्ष्मणके सिवाय और कोई वीर बाकी बचा ही नहीं है कि जिसके साथ युद्ध करके मारनेकी आवश्यकता हो। यह सोचकर क्षात्रधर्मके अनुसार उसने चाचाको मारनेमें कोई अपराध न समझकर उन्हें मारनेके लिए गारुडास्त्रका प्रयोग किया ॥ ११५ ॥ ११६ ॥ उस गारुडास्त्रको अपने ऊपर आते देखकर लक्ष्मण सिटपिटा गये। उनको सारी चातुरी भूल गयी और मूर्छित होकर रथसे पृथ्वीपर गिर पड़े। लक्ष्मणको रथसे गिरते देखकर राम दीक्षित होते हुए भी धनुष-बाण लेकर दौड़े और लक्ष्मणको बचानेके लिए उन्होंने कुशके छोड़े हुए गारुडास्त्रपर अपना ब्रह्मास्त्र छोड़ दिया। ब्रह्मास्त्रके पहुँचनेपर गारुडास्त्र आकाशमें ही ठंढा हो

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

मुमोच बाणमाकाशे गरुडोपरि सादरम् । तेन तच्छांतिमगमद्ब्रह्मास्त्रेण तु गारुडम् ॥१२०॥
ततः कुशः संदधे स सर्पास्त्रं राघवोपरि । उवाच नाहं सीतावत्सुलभश्छलितं त्वया ॥१२१॥
जनान् दर्शयितुं स्वीयं पौरुषं जानकी वने । त्यक्ता त्वया वृथा पूर्वं जानेऽहं तत्र चेष्टितम् ॥१२२॥
वाल्मीकिशिक्षितां विद्यां ममाद्य त्वं विलोकय । नोचेत्त्वं याहि शरणं वाल्मीकिं जानकीमपि ॥१२३॥
तद्वाक्शरैर्भिन्नमर्मा रामः सार्पं विलोक्य तत् । ओत्वस्त्रं ससृजे घोरं तेन तच्छांतिमाप वै ॥१२४॥
संदधे सारमेयास्त्रं कुशस्तं राघवं पुनः । रामोऽपि मौशलास्त्रेण सारमेयं न्यवारयत् ॥१२५॥
वह्न्यस्त्रं ससृजे घोरं कुशोऽपि राघवं जवात् । न्यवारयच्च तद्रामो मेघास्त्रेण स लीलया ॥१२६॥
वायव्यं ससृजे रामं जानकीजठरोद्भवः । न्यवारयच्च तद्रामः पर्वतास्त्रेण लीलया ॥१२७॥
वज्रास्त्रं ससृजे रामं सीतेयः सोऽतिसम्भ्रमात् । याम्यास्त्रेणाथ रामोऽपि वज्रास्त्रं तन्न्यवारयत् ॥१२८॥
ब्रह्मास्त्रं ससृजे रामं सीतेयः परमादरात् । हाहाकारस्तदा चासीद्राघवस्याध्वरांगणे ॥१२९॥
न्यवारयत्तद्ब्रह्मास्त्रं वैष्णवेन रघूत्तमः । ततो रामं कुशस्तीक्ष्णान्नाराचांश्छतशः पुनः ॥१३०॥
मुमोच राघवश्चापि मार्गणांश्छतशः कुशम् । एव तत्तुमुलं युद्धं बभूव प्रहरं तयोः ॥१३१॥
तदाऽऽसीत्कौतुकं रामकुशयोर्युध्यतोर्महत् । रामचापविनिर्मुक्ता गता ये ये पतत्रिणः ॥१३२॥
ते ते कुशस्योत्तमांगोपरिष्टाद्धरणीतले । पतंति स्म तथा ये ये कुशचापविनिर्गताः ॥१३३॥
शरास्ते रामचंद्रस्य पतंति स्म पदांतिके । तद्दृष्ट्वा कौतुकं रामो विस्मयाविष्टमानसः ॥१३४॥
आज्ञापयत्स्वसचिव गच्छ वाल्मीकिसन्निधिम् । पृच्छस्व तं नमस्कृत्य कौ ते शिष्याविमौ बली॥१३५॥
ततो ज्ञात्वाऽनयोर्घाते करिष्यामि मतिं क्षणात् । तथेति रामवचनात्स मन्त्री रथमास्थितः ॥१३६॥
क्रोशद्वयांतरेणैव सव्यं कृत्वा कुशं लवम् । दृष्ट्वा नत्वाऽथ वाल्मीकिं रामवाक्यं न्यवेदयत् ॥१३७॥
मुनिः प्राह मन्त्रिणं त्वं वद रामाय मे वचः । सभामध्ये गायनस्य काले श्वो विदितं तव ॥१३८॥

गया ॥ ११७—१२० ॥ इसके अनन्तर कुशने रामपर सर्पास्त्र छोड़ा और कहा—मैं सीताकी तरह सहजमें नहीं छला जा सकूँगा । संसारको दिखानेके लिए तुमने सीतापर अपना पुरुषार्थ दिखाया था । अब यदि सती-साध्वी नारीके साथ तुमने जो विश्वासघात किया है, उसे मैं अच्छी तरह जानता हूँ । यदि सामर्थ्य हो तो महर्षि वाल्मीकिकी दी हुई अस्त्रविद्याका चमत्कार देखो । यदि ऐसा न कर सको तो हाथ बाँधकर वाल्मीकि तथा सीताकी शरणमें चलकर आत्मरक्षाकी भीख माँगो ॥ १२१–१२३ ॥ कुशकी उन नोक-झोंक भरी बातोंको सुनकर रामने कुशके सर्पास्त्रपर विडालास्त्रका प्रयोग किया । जिससे वह शान्त हो गया । फिर कुशने रामपर सारमेयास्त्र चलाया और रामने मौशलास्त्र चलाकर उसका निवारण किया । कुशने रामपर अग्न्यस्त्र चलाया तो रामने मेघास्त्र चलाकर उसको शान्त किया । तब सीताके सुकुमार बेटे कुशने रामपर वायव्यास्त्र चलाया । तब रामने पर्वतास्त्र चलाकर उसका निवारण किया ॥ १२४–१२७ ॥ तब कुशने वज्रास्त्र चलाया और रामने याम्यास्त्र चलाकर उसको शान्त किया ॥ १२८ ॥ जब कुशने रामके ऊपर वज्रास्त्र चलाया, उस समय यज्ञशालामें हाहाकार मच गया । किन्तु रामने अपने वैष्णवास्त्रसे उसको व्यर्थ कर दिया । इसके बाद कुशने रामके ऊपर और भी सैकड़ों बाण चलाये ॥ १२९ ॥ १३० ॥ रामने भी उनके प्रतीकारके रूपमें सैकड़ों बाण चलाये । इस प्रकार एक प्रहर तक राम और कुशमें तुमुल युद्ध होता रहा ॥ १३१ ॥ उस समय बाप-बेटेके युद्धमें यह बड़ा कौतुक था कि जो बाण रामके हाथोंसे छूटते, वे कुशके मस्तकपर गिरते थे तथा कुश द्वारा छूटे बाण रामके पैरोंपर गिरा करते थे । यह कौतुक देखकर विस्मित रामने अपने मंत्रीको बुलाया और उससे कहा कि वाल्मीकिके पास जाकर पूछो कि आपके ये महाबलवान् शिष्य कौन हैं ॥ १३२—१३५ ॥ यह जानकर मैं इनको मारनेका शीघ्र कोई उपाय करूँगा । रामके आज्ञानुसार मन्त्री रथपर सवार हुआ और दो कोस चलकर वाल्मीकिके पास जा पहुँचा । वाल्मीकिको देखकर मन्त्रीने प्रणाम किया और रामका सन्देश सुनाया ॥ १३६ ॥ १३७ ॥ मुनि वाल्मीकिने कहा—उनसे कह दो कि कल

CC-0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

भविष्यति समस्तं हि वृत्तं बालकयोः शुभम् । ततो मन्त्री मुनेर्वाक्यं राघवाय न्यवेदयत् ॥१३९॥
कुशं लवं समाहूय वाल्मीकिरपि तौ मुदा । समालिंग्य कथाभिस्तां निनाय रजनीं सुखम् ॥१४०॥

इति श्रीशतकोटिरामचरितांतर्गते श्रीमदानन्दरामायणे वाल्मीकीये जन्मकाण्डे
कुशलवयोः पराक्रमवर्णनं नाम सप्तमः सर्गः ॥ ७ ॥

अष्टमः सर्गः

(रामका सीताको पुनः स्वीकार करना)

श्रीरामदास उवाच

अथ प्रभाते रामेण समाहूतावुभौ शिशू । नत्वा मुनिं मातरञ्च सभायां जग्मतुर्मुदा ॥ १ ॥
वाल्मीकेराज्ञया बालौ जटाकृष्णाजिनांबरौ । जन्मकांडं त्वेकमेव जगतुस्तौ पितुः पुरः ॥ २ ॥
जनैः श्रुत्वा स्वचरितं रामोऽभूदतिविस्मितः ॥ ३ ॥
आसन् जनाश्चापि सर्वे विस्मयाविष्टमानसाः । ज्ञात्वा सीताकुमारौ तौ सन्तोषं परमं ययुः ॥ ४ ॥
एतस्मिन्नन्तरे सर्वे लववाग्यस्त्रपीडिताः । शत्रुघ्नाद्या ययुस्तत्र यानस्थाश्चास्त्रजीविताः ॥ ५ ॥
अंगदाद्याः पार्थिवाश्च मोहनास्त्रैकजीविताः । ययुः सवानराः सर्वे लक्ष्मणोऽपि ययावरुक् ॥ ६ ॥
सर्वे नत्वा रामचन्द्रं तस्थुस्तस्यांतिके मुदा । अथ संमंत्र्य रामोऽपि तौ विसृज्यादरेण हि ॥ ७ ॥
राक्षसेंद्रं लक्ष्मणं च शत्रुघ्नं मकरध्वजम् । खगराजं सुषेणं च जांबवन्तं वचोऽब्रवीत् ॥ ८ ॥
आनयध्वं मुनिवरं ससीतं देवसंमितम् । अद्यास्तु पर्षदां मध्ये प्रत्ययो वै सभांगणे ॥ ९ ॥
गंगाया दक्षिणे तीरे सभा कार्याऽऽयता शुभा । करोतु शपथं सीता ममाग्रे जाह्नवीतटे ॥१०॥
मुनीश्वराद्याः सर्वे तां जानन्तु गतकल्मषाम् । तथा ममापि वाल्मीके शुद्धिं जानंतु वेगतः ॥११॥

जब सभामें ये दोनों रामायण गाने पहुँचेंगे, उस समय सारा वृत्तान्त ज्ञात हो जायगा ॥ १३८ ॥ तदनुसार मंत्री लौट आया और वाल्मीकिने जो कुछ कहा था, सो रामको बतला दिया । उधर वाल्मीकिने लव और कुशको पास बुलाकर हृदयसे लगाया और अनेक प्रकारकी कहानियाँ कहते हुए रात बितायी ॥ १३९ ॥ १४० ॥ इति श्रीशतकोटिरामचरितान्तर्गते श्रीमदानन्दरामायणे पं० रामतेजपाण्डेयकृत-'ज्योत्स्ना'भाषाटीकासहिते जन्मकाण्डे सप्तमः सर्गः ॥ ७ ॥

श्रीरामदास बोले--दूसरे दिन सबेरे रामने उन दोनों बालकोंको बुलवाया और वे अपनी माता तथा मुनि वाल्मीकिको प्रणाम करके रामकी सभामें गये ॥ १ ॥ जटा एवं बल्कल वस्त्र धारण किये हुए उन बच्चोंने उस दिन वाल्मीकिके आज्ञानुसार केवल जन्मकाण्डका गान किया ॥ २ ॥ रामने जब अपना चरित्र सुना तो बड़े विस्मित हुए । सभामें बैठे हुए लोगोंको भी बड़ा आश्चर्य हुआ और जब यह जाना कि ये सीताके बेटे हैं तो बहुत ही प्रसन्न हुए ॥ ३ ॥ ४ ॥ उसी समय लवके बाणोंसे पीडित लक्ष्मण-शत्रुघ्न आदि भी वहाँ आ पहुँचे । उनके साथ अङ्गद-हनुमान् आदि जो लवके मोहनास्त्रसे मूर्छित हो गये थे, वे भी आये । वहांपर सबोंने रामको प्रणाम किया और उनके समीप जाकर बैठ गये । तब रामने अपने मंत्रियोंसे सलाह करके लव कुशको विदा कर दिया ॥ ५-७ ॥ तदनन्तर विभीषण, लक्ष्मण, शत्रुघ्न, मकरध्वज तथा अङ्गदको सम्बोधित करके राम बोले--तुम सब जाकर वाल्मीकिके साथ सीताको यहाँ ले आओ । आज इस सभामें यह निश्चय किया जायगा कि सीता-का क्या अपराध है । इसी पुनीत जाह्नवीके तटपर सीता शपथ खायगी । यहांपर आये हुए समस्त ऋषिगण जिससे यह समझ जायँ कि सीता सर्वथा निष्कलंक तथा पापोंसे रहित है । साथ ही हमारी ओरसे वाल्मीकिकी भी परीक्षा होगी । इस प्रकार रामके आज्ञानुसार लक्ष्मण वाल्मीकिके पास गये और उन्होंने

CC0. Public Domain. Kartik Singh Jayaraman Nair Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

इति तद्वचनं श्रुत्वा लक्ष्मणाद्या महीं गताः । ऊचुर्यथोक्तं रामेण वाल्मीकिं लक्ष्मणादिकाः ॥१२॥
रामस्य हृद्गतं सर्वं ज्ञात्वा वाल्मीकिरब्रवीत् । समर्चितान् सुमंत्राद्यान् लक्ष्मणाय समर्प्य च ॥१३॥
युष्माभिः कथनीयं यद्वाक्यं श्रीराघवं प्रति । श्वः करिष्यति वै सीता शपथं जनसंसदि ॥१४॥
योषितां परमो देवः पतिरेको न चापरः । पतिं विना गतिः काऽन्या नार्याश्चास्ति जगत्त्रये॥१५॥
लक्ष्मणाद्यास्ततः सर्वे राममागत्य ते पुनः । सुमंत्रादींश्चतुर्वीरान्राघवाय समर्प्य च ॥१६॥
वाल्मीकेर्वचनं हर्षादूचुस्तं रघुनायकम् । वाल्मीकिवचनं श्रुत्वा तुतोष राघवोऽपि च ॥१७॥
सुमंत्रं भरतं वायुपुत्रं वानरनायकः । समालिंग्य चतुर्भ्यः स पुनर्जातानमन्यत ॥१८॥
सीतया पालिताः सर्वे वयं लवजितास्त्विति । कथयामासुः श्रीरामं सुमंत्राद्याः सविस्तरम् ॥१९॥
द्वितीये दिवसे कृत्वा सभां श्रेष्ठां मनोरमाम् । सर्वांस्तस्यां समाहूय रामो वाक्यमथाब्रवीत् ॥२०॥
मुनयः पार्थिवाः सर्वे शृणुत स्वस्थमानसाः । सीतायाः शपथं लोका विजानंत्वशुभं शुभम् ॥२१॥
इत्युक्ता राघवेणाथ लोकाः सीतादिदृक्षवः । ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्राश्चैव सहस्रशः ॥२२॥
सवानराः समाजग्मुस्तद्दिव्यं द्रष्टुमुद्यताः । ततो मुनिवरस्तूर्णं ससीतः समुपागतः ॥२३॥
अग्रतस्तं मुनिं कृत्वा यांती किञ्चिदवाङ्मुखी । कृतांजलिर्मुदा सीता शनैर्यज्ञं विवेश तम् ॥२४॥
दृष्ट्वा लक्ष्मीमिवायांतीं श्रीविष्णोरनुयायिनीम् । वाल्मीकेः पृष्ठतः सीतां जयघोषं प्रचक्रिरे ॥२५॥
तदा मध्ये जनौघस्य प्रविश्य मुनिपुङ्गवः । सीतासहायो वाल्मीकिस्तदा राघवमब्रवीत् ॥२६॥
इयं दाशरथे सीता सुवृत्ता धर्मचारिणी । त्वया पापात्पुरा त्यक्ता ममाश्रमसमीपतः ॥२७॥
लोकापवादभीतेन यमुनादक्षिणे तटे । प्रत्ययं दास्यते साऽद्य तदनुज्ञातुमर्हसि ॥२८॥
इमौ तु सीतातनयौ कुशस्त्वत्तो लवो मया । लवैर्विनिर्मितः सीताभयात्प्रत्यग्रचेतसा ॥२९॥

जो कुछ कहा था, सो कह सुनाया ॥ ८–११ ॥ रामके मनकी बात जानकर वाल्मीकिने कहा—आज तुम लोग जाओ और रामसे कह दो कि कल सभामें जाकर सीता सब लोगोंके सामने शपथ खायगी ॥ १२–१४ ॥ स्त्रियोंके लिए पतिके सिवाय और कोई देवता नहीं होता। ऐसी अवस्थामें सीता और कर ही क्या सकती है। पतिके बिना स्त्रीके लिए लोकमें और कोई गति भी नहीं है ॥ १५ ॥ तब लक्ष्मण आदि वहाँसे लौट आये। रामने उनके मुखसे वाल्मीकिका सन्देश सुना तो परम प्रसन्न हुए। वे लोग वहाँसे लौटते समय सुमन्त्र आदि चारों वीरोंको, जिनको कि लवने बन्दी बना रक्खा था, अपने साथ छुड़ा लाये थे। राम उन सबको अपनी छातीसे लगाकर मिले और यह समझा कि इन लोगोंका पुनर्जन्म हुआ है ॥ १६–१८ ॥ उन सबोंने अपना हाल बतलाते हुए कहा कि यद्यपि लवने हम लोगोंको कैद कर लिया था, किन्तु सीताने पूर्णरूपसे हमारी रक्षा की ॥ १९ ॥ दूसरे दिन एक विशाल सभा आयोजित की गयी। उसमें सब लोगोंको सम्बोधित करके रामने कहा—हे देशविदेशसे आये हुए ऋषियों ! आज इस सभामें आप लोगोंके समक्ष सीता शपथ खायगी। इससे आप लोगोंको उसके सुकृत तथा दुष्कृतका पता लग जायगा। इस प्रकार रामके वचन सुने तो सब लोग सीताको देखनेके लिए उतावले हो उठे। नगरमें भी यह समाचार पहुँच गया। अतएव इस दिव्य शपथको देखनेकी लालसासे कितने ही ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र वहाँ आ पहुँचे ॥ २०–२२ ॥ थोड़ी देर बाद सीताके साथ वाल्मीकि भी सभामें पधारे। आगे-आगे वाल्मीकि थे और उनके पीछे नीचा सिर किये सीता मन्दगतिसे सभामें आयीं। उस समय सीता और वाल्मीकिको देखकर ऐसा लगता था कि मानों विष्णुके पीछे-पीछे लक्ष्मी चली आ रही हैं। सीताको देखते ही लोगोंने जयजयकार किया और वाल्मीकिजी सभाके बीचमें पहुँचकर रामसे कहने लगे—॥ २३–२६ ॥ हे राम ! कुछ दिन हुए, जब आपने लोकापवादके भयसे सीताको मेरे आश्रमके समीप छोड़वा दिया था। आज वह ही सीता आपके सामने शपथ खायगी, आप इसके लिए आज्ञा दें। सीताके इन दोनों पुत्रोंमें कुश आपका तथा लव (जलकी बूँदोंसे) बनाया हुआ मेरा बेटा है। उसे मैंने सहसा सीताके डरसे बनाया था। ये दोनों बेटे

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

सुताविमौ तु दुर्धर्षौ तथ्यमेतद्ब्रवीमि ते । प्रचेतसोऽहं दशमः पुत्रो रघुकुलोद्वह ॥३०॥
अनृतं न स्मराम्युक्तं यथेमौ तव पुत्रकौ । बहून्वर्षगणान् सम्यक् तपश्चर्या मया कृता ॥३१॥
नोपश्नीयां फलं तस्या दुष्टेयं यदि मैथिली । इत्युक्त्वा राघवस्यांके दक्षिणे स्थाप्य वै कुशम् ॥३२॥
लवं विन्यस्य वामांके तस्थौ तस्याग्रतो मुनिः । रामोऽपि तौ समालिंग्य मूर्ध्न्यवघ्राय सादरम् ॥३३॥
लवस्य मस्तके हस्तं संस्थाप्य जगदीश्वरः । अतिहस्वतरं बालं पूर्ववत्सोऽकरोच्च तम् ॥३४॥
ततो रामोऽपि तां सीतां दृष्ट्वा बाहुद्वयान्विताम् । अज्ञात इव संप्राह लक्ष्मणं पुरतः स्थितम् ॥३५॥
त्वया भुजः समानीतः सीताया मां प्रदर्शितुम् । पुरा तमानयस्वाद्य चेदस्ति रक्षितस्त्वया ॥३६॥
तथेत्युक्त्वा लक्ष्मणोऽपि पेटिकानिहितं भुजम् । सीतायाः पुरतो रामं दर्शयामास सादरम् ॥३७॥
सीताभुजोपमं दृष्ट्वा भुजं मांसादिभिर्युतम् । पञ्चवर्षान्तरे काले ह्यासन् सर्वेऽतिविस्मिताः ॥३८॥
एतस्मिन्नन्तरे तत्र पश्यत्सु सकलेष्वपि । भुजः स गुप्ततां प्राप्तो विश्वकर्मोद्भवः क्षणात् ॥३९॥
तद्दृष्ट्वा कौतुकं लोका ह्यभूवन्नतिविस्मिताः । रामोऽपि विस्मितः प्राह वाल्मीकिं प्रणिपत्य च ॥४०॥
एवमेव महाप्राज्ञ यदुक्तं मां त्वयाऽधुना । प्रत्ययो जनितो मह्यं तव वाक्यैरकिल्विषैः ॥४१॥
लंकायामपि दृष्टो मे वैदेह्याः प्रत्ययो महान् । देवानां पुरतस्तेन मन्दिरं संप्रवेशिता ॥४२॥
सेयं लोकभयाद्ब्रह्मन्नपापाऽपि सती पुरा । सीता मया परित्यक्ता तद्भवान् क्षन्तुमर्हति ॥४३॥
मत्तो जातोस्ति जानामि कुशोऽयं च लवस्त्वया । लवैर्भ्रांत्या कृतो वेद्मि सीताशापभयान्मुने ॥४४॥
तथापि लोकान्सकलान्द्रष्टुं सीताऽत्र प्रत्ययम् । करोतु शपथं चापि सभायां तव सन्निधौ ॥४५॥
शुद्धायां जगतीमध्ये सीतामङ्गीकरोम्यहम् । तदा तच्छपथं द्रष्टुमासंल्लोकाः समुत्सुकाः ॥४६॥
सभया जानकी चाथ तदा कौशेयवासिनी । उदङ्मुखी ह्यधोदृष्टिः प्रांजलिर्वाक्यमब्रवीत् ॥४७॥

असाधारण वीर हैं । कोई भी योद्धा इसके सामने नहीं टिक सका। विधाताका मैं दसवाँ पुत्र हूँ। आज तक मैं कभी झूठ नहीं बोला । अनेक वर्षोंतक मैंने घोर तपस्या की है । यदि सीता किसी तरह भी पापाचारिणी होती तो मैं इसके हाथोंका जलतक न ग्रहण करता। इतना कहकर वाल्मीकिने कुशको रामके दाहिनी बगल तथा लवको बायीं ओर बिठला दिया और स्वयं उसके सामने एक ऊँचे आसनपर बैठे। रामने बड़े स्नेहसे उन बच्चोंका आलिंगन किया, माथा सूँघा और लवके मस्तकपर अपना दाहिना हाथ रखकर कुशके समान ही अवस्थाका उसको भी बना दिया ॥ २७-३४ ॥ इसके अनन्तर रामने सीताकी ओर देखा तो सीताकी दोनों भुजायें ज्योंकी त्यों ठीक देखीं । उन्होंने अज्ञातभावसे लक्ष्मणको आज्ञा दी कि उस समय जो सीताकी भुजा काटकर जङ्गलसे तुम दिखाने लाये थे, यदि वह सुरक्षित रीतिसे रक्खी हो तो यहाँ ले आओ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ लक्ष्मणने "बहुत अच्छा" कहकर पेटीमें रक्खी भुजा लाकर रामके सामने रख दी ॥ ३७ ॥ इतने दिन बीतनेपर भी ठीक सीताकी भुजाओंके समान लटकते मांसके लोथड़े तथा रुधिरसंयुत भुजाओंको देखकर सभामें जितने लोग बैठे थे, वे बड़े विस्मित हुए ॥ ३८ ॥ इसी बीच लोगोंके देखते ही देखते वह विश्वकर्माकी बनायी भुजा गायब हो गयी। यह कौतुक देखकर लोगोंको और भी आश्चर्य हुआ। तब रामने विस्मित होकर वाल्मीकिसे कहा—हे महाप्राज्ञ ! मुझे तो आपकी बातोंसे ही विश्वास हो गया था कि सीता परम पवित्र है ॥ ३९-४१ ॥ लङ्कामें भी मैंने सीताकी शपथ देखी थी। उस समय देवताओंके समक्ष शपथ लेनेपर ही मैंने इसे अङ्गीकार किया था ॥ ४२ ॥ तथापि लोकापवादके भयसे पवित्र समझकर भी मैंने सीताका परित्याग किया। आप मेरे इस अपराधको क्षमा करें ॥ ४३ ॥ यह भी मैं जानता हूँ कि कुश मेरा पुत्र है और लवको आपने सीताके शापभयसे बनाया था ॥ ४४ ॥ यह सब होते हुए भी इन संसारवालोंको विश्वास दिलानेके लिए सीता इस सभामें शपथ ले ॥ ४५ ॥ यदि इस जनसमाजमें और इस संसारमें सीता शुद्ध सिद्ध हो गयी तो मैं इसको फिरसे अङ्गीकार कर लूँगा। उस समय सीताकी शपथको देखनेके लिए वहाँ बैठे हुए सब लोग उत्सुक हो रहे थे ॥ ४६ ॥ तदनन्तर सभामें रेशमी कपड़े पहने सीता खड़ी हो गयीं और हाथ

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

रामादन्यमहं चेद्धि मनसाऽपि न चिन्तये । तर्हि मे धरणी देवि विवरं दातुमर्हसि ॥४८॥
एवं शपंत्याः सीतायाः प्रादुरासीन्महाद्भुतम् । भूतलाद्दिव्यमत्यर्थं सिंहासनमनुत्तमम् ॥४९॥
भुवो विवरमार्गेण समानीतं मनोरमम् । नागेन्द्रैर्ध्रियमाणं तद्दिव्यदेहं रविप्रभम् ॥५०॥
भूदेवी जानकीं दोर्भ्यां धृत्वा दुहितरं निजाम् । स्वागतासीति तामुक्त्वाऽऽसने सा संन्यवेशयत् ॥५१॥
वस्त्रालङ्कारस्रग्गंधसुगंधैः पूज्य मैथिलीम् । समालिंग्याथ भूदेवी वीजयामास सादरम् ॥५२॥
तदा शनैः शनैर्भूम्यां गुप्तं सिंहासनं त्वभूत् । सिंहासनस्थां वैदेहीं प्रविशन्तीं रसातलम् ॥५३॥
दृष्ट्वाऽऽकाशस्थिता देवस्त्रियः सर्वास्तु सम्भ्रमात् । निरन्तराभिर्वैदेहीं ववर्षुः पुष्पवृष्टिभिः ॥५४॥
साधुवादश्च सुमहान्बभूव सुरकीर्तितः । अन्तरिक्षे च भूमौ च सर्वं स्थावरजङ्गमम् ॥५५॥
तदा बभूव चकितं सीताशपथदर्शनात् । ऊचुस्ते वसुधा वाचो वानराश्च नरादिकाः ॥५६॥
केचिच्चिन्तापराः केचिदासन्ध्यानपरायणाः । केचिद्रामं निरीक्षन्तः केचित्सीतामचेतसः ॥५७॥
मुहूर्तमात्रं तत्सर्वं तूष्णींभूतमचेतनम् । प्रविशन्तीं भुवं सीतां दृष्ट्वा संमोहितं जगत् ॥५८॥
एतस्मिन्नन्तरे रामः प्रविशन्तीं हि भूतले । विदेहजां तदा स्पृष्ट्वा वामहस्तेन संभ्रमात् ॥५९॥
यां दधार करेणादौ धृत्वा हस्तेन वै भुवम् । ततस्तां प्रार्थयामास भुवं स रघुनन्दनः ॥६०॥

श्रीरामचन्द्र उवाच

देवि त्वं सर्वलोकानां निवासस्थानमुत्तमम् । असि लोकैकमाता त्वं महानीरोर्ध्वतः सदा ॥६१॥
वर्तसे पुण्यरूपा त्वं वसुदा सकलान् जनान् । स्वजठरादौषधीस्त्वं करोषि विश्वतृप्तिदाः ॥६२॥
त्वं दुर्गा त्वं स्वरा लक्ष्मीर्मम विष्णोः प्रिया शुभा। त्वमेवाद्यात्र मे शक्तिर्निर्मिताऽसि मयैव हि ॥६३॥
निजोदराद्ददासि त्वं धातून्प्रीत्या जनान्सदा । श्रमायुक्ता त्वमेवासि सूक्तासूक्तादिकर्मसु ॥६४॥

जोड़कर नीची निगाह तथा ऊपर मुँह करके बोलीं—॥ ४७ ॥ हे पृथ्वी माता ! यदि रामके सिवाय अन्य किसीको मैंने अपने हृदयसे भी न सोचा हो तो आप मुझे ऐसी जगह दीजिए कि जिससे मैं आपमें समा जाऊँ ॥ ४८ ॥ इस प्रकार सीताके प्रार्थना करनेपर तुरन्त एक दिव्य सिंहासन पृथ्वीके भीतरसे निकला । उसको बड़े-बड़े नाग अपने सिरपर उठाये हुए थे । सूर्यके समान देदीप्यमान उन नागोंका प्रकाश था ॥ ४९ ॥ ५० ॥ इतनेमें साक्षात् पृथ्वी देवीने अपनी दोनों भुजाओंसे सीताका स्वागत किया । फिर छातीसे लगा तथा गोदमें लेकर उन्हें उस सिंहासनपर बिठाल दिया । इसके अनन्तर वस्त्र-अलंकार-माला-फल आदिसे सीताकी पूजा की और छातीसे लगाकर पंखा झलने लगीं ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ इसके बाद धीरे-धीरे वह सिंहासन पृथ्वीके भीतर घुसने लगा । सिंहासनपर बैठी हुई सीताको पातालमें जाती देखकर आकाशमें स्थित सारी देवांगनाएँ उनपर पुष्पोंकी वर्षा करने लगीं ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ आकाश और पृथ्वीमें देवताओं और मनुष्योंने साधुवाद किया । सीताकी उस शपथको देखकर समस्त स्थावर-जंगम प्राणी चकित हो गये और अपनी सुधि-बुधि भूलकर परस्पर बातें करने लगे ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ उनमें कुछ लोग चिन्तित थे और कुछ ध्यानमग्न । कुछ लोग रामको देख रहे थे । कुछ लोग अपनी सुधि-बुधि भूलकर सीताकी ओर निहार रहे थे ॥ ५७ ॥ मुहूर्तभरके लिए वहाँ सारा समाज सन्न हो गया । सीताको पृथ्वीके भीतर समाती देखकर समस्त संसार मुग्ध हो गया ॥ ५८ ॥ राम सीताको पृथ्वीमें धँसती देखकर अपने सिंहासनसे कूद पड़े और पृथ्वीके पास जा पहुँचे । वे उनका हाथ अपने हाथसे पकड़कर इस प्रकार पृथ्वीसे प्रार्थना करने लगे ॥ ५९ ॥ ६० ॥ श्रीरामचन्द्र बोले—हे देवि ! आप सारे संसारकी निवासभूमि हैं । समस्त जगत्की माता होकर महानीरके ऊपर आप स्थित हैं ॥ ६१ ॥ आप पुण्यरूपा हैं । समस्त जनोंको हर प्रकारकी सम्पत्तियां देनेकी सामर्थ्य रखती हैं । आप अपने उदरसे अनेक प्रकारकी ओषधियाँ उत्पन्न करके सबकी रक्षा करती हैं । आप दुर्गा, स्वरा और विष्णुकी प्रिया लक्ष्मी हैं । आप आदिशक्ति हैं और मैंने ही आपको बनाया है ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ आप अपने उदरसे भाँति-भाँतिके धातु निकालकर

CC0. In Public Domain. Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

जानकी तव कन्येयं श्वश्रूस्त्वं मेऽधुना त्विह । कन्यादानं कुरु मुदा त्वया पूर्वं कृतं न हि ॥६५॥
प्रसीद देवि नोचेन्मे त्वयि क्रोधो भविष्यति ।

श्रीरामदास उवाच

इति संप्रार्थिता चापि राघवेण महात्मना ॥६६॥
नारी काठिन्यभावात्सा नाशृणोद्राघवेरितम् । शनैः शनैरधः सीतासहिता सा जगाम ह ॥६७॥
तां गच्छन्तीं पुनर्दृष्ट्वा भुवं रामो धृतामपि । बभूव क्रोधताम्राक्षस्तदा लक्ष्मणमब्रवीत् ॥६८॥
चापमानय सौमित्रे शिक्षयेऽहं भुवं त्विमाम् । मत्क्षुरोपमबाणेन वसुधेयं विदेहजाम् ॥६९॥
मामद्य दास्यति क्षिप्रमस्य घातं न रोचये । ततोऽसौ लक्ष्मणानीतं करे कोदण्डमुत्तमम् ॥७०॥
धृत्वा ज्यारोपणं कृत्वा शरसंधानमातनोत् । तदा ववौ महान्वायुश्चुक्षुभे लवणार्णवः ॥७१॥
तारा निपेतुर्धरणीं बभूवुः सरजा दिशः । चकम्पे धरणी सापि त्राहीति वदती मुहुः ॥७२॥
कराभ्यां जानकीं धृत्वा रामस्यांके न्यवेशयत् । श्रीरामपदयोः पृथ्वी शिरसा नमनं व्यधात् ॥७३॥
तदा खे देववाद्यानि नेदुः कुसुमवृष्टिभिः । ववर्षुर्जानकीं राम देवसंघा मुदान्विताः ॥७४॥
ततो रामोऽपि तां दृष्ट्वा पदयोर्नमतीं भुवम् । स्वक्रोधं शान्तमकरोत्कराभ्यां चापमार्गणौ ॥७५॥
विसृज्योत्थापयामास स्वकरेणावनिं प्रभुः । ततः सा राघवं नत्वा प्रसाद्य च पुनः पुनः ॥७६॥
दत्त्वा विदेहकन्यायै तं सिंहासनमुत्तमम् । सीतां स्तुत्वाऽथ तां पृष्ट्वा तथा संपूजिताऽपि च ॥७७॥
आमन्त्र्य राघवं पृथ्वी क्षणादंतर्हिताऽभवत् । तदा सीतां जनाः सर्वे पुनर्जातां तु मेनिरे ॥७८॥
जयशब्दैः प्रणमुस्तां चक्रुः पूजां पृथक् पृथक् । ददौ दानान्यनेकानि तदा रामो मुदान्वितः ॥७९॥
नववाद्यनिनादाश्च सम्बभूवुः समन्ततः । ननृतुर्वारनार्यश्च तुष्टुवुर्बन्दिमागधाः ॥८०॥

संसारी लोगोंको प्रीतिपूर्वक प्रदान करती हैं। सूक्त और असूक्त जितने भी कर्म हैं, उनमें आप क्षमारूपा हैं ॥ ६४ ॥ यह सीता आपकी कन्या है । इस नाते आप मेरी सास हैं । आपने विवाहके समय कन्यादान नहीं किया था, सो अब कर दीजिए ॥ ६५ ॥ हे देवि ! आप मेरेपर प्रसन्न हो जायँ । नहीं तो मैं आपके ऊपर क्रुद्ध हो जाऊँगा । श्रीरामदासने कहा—रामके इस तरह प्रार्थना करनेपर भी पृथ्वीने उनकी एक न सुनी । क्योंकि स्वभावसे हो नारियोंका हृदय कठिन हुआ करता है। सीता धीरे-धीरे पृथ्वीतलमें समाती जा रही थीं ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ विनय करनेपर भी जब रामने देखा कि पृथ्वी मेरी बातोंपर कुछ ध्यान नहीं दे रही है तो मारे क्रोधके उनकी आँखें लाल हो गयीं और लक्ष्मणसे बोले—॥ ६८ ॥ लक्ष्मण ! मेरा धनुष तो उठा लाओ, मैं पृथ्वीको उसके दुराग्रहका दण्ड दे दूँ । मेरे छुरे सदृश तीक्ष्ण बाणसे डरकर यह सीताको लौटा देगी। इसे मैं मारना नहीं चाहता, चाहता हूँ केवल सीताको इसके हाथोंसे लौटना। तदनुसार तुरन्त लक्ष्मण धनुष उठा लाये। रामने उसे लेकर रोदा ठोक किया और बाण चढ़ाया। उस समय जोरोंसे आँधी चलने लगी, समुद्रमें प्रलयकालकी लहरें उठने लगीं, तारे टूट-टूटकर गिरने लगे और चारों दिशाएँ धूलसे आच्छादित हो गयीं। ऐसी अवस्थामें "त्राहि-त्राहि" करती हुई पृथ्वी काँपने लगी और उसने अपने हाथों सीताको उठाकर रामकी गोदमें बिठा दिया। इसके बाद पृथ्वीने सिर झुकाकर रामके चरणोंकी वन्दना की ॥ ६९–७३ ॥ उस समय स्वर्गमें देवताओंने देववाद्य बजाये और राम तथा सीतापर फूलोंकी वर्षा की ॥ ७४ ॥ इसके बाद जब रामने देखा कि पृथ्वी मेरे चरणमें झुकी हुई विनती कर रही है तो अपना कोप शान्त कर लिया तथा धनुष-बाणका परित्याग करके अपने दानों हाथोंसे पृथ्वीको उठाया । इसके अनन्तर पृथ्वीने फिर भगवान्‌को बार-बार नमस्कार किया, प्रार्थना की और सीता तथा वह सुवर्णमय सिंहासन रामको समर्पण कर दिया। फिर सीताकी स्तुति की। सीताने भी पृथ्वीकी विधिवत् पूजा की । तत्पश्चात् रामकी आज्ञा लेकर क्षण भरके भीतर ही पृथ्वी अन्तर्धान हो गयी। उस समय सभामें बैठे हुए लोगोंने सीताका पुनर्जन्म समझा ॥ ७५–७८ ॥ सब लोगोंने सीताकी विधिवत् पूजा की और जय-जयकार करके प्रणाम किया। तब रामने अनेक प्रकारके दान दिये ॥ ७९ ॥ भाँति-भाँतिके नवीन बाजे बजे,

CC0. In Public Domain. Kirtika Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

सीतायाः शपथो यत्र जाह्नव्या दक्षिणे तटे । सीताकुण्डमिति ख्यातं तत्र तीर्थं बभूव ह ॥८१॥
पातालस्थं जलं पुण्यं सन्तप्तमनलोपमम् । वर्ततेऽद्यापि तत्तीर्थे सीतोष्णश्वासकारणात् ॥८२॥
तदत्र जानकीकुण्डं स्मरणाद्भयनाशनम् । पत्युरायुष्यवृद्ध्यर्थं स्त्रीभिः सेव्यं सदा भुवि ॥८३॥
ततः सीतायुतो रामः पुत्राभ्यां सहितो मुदा । वस्त्रालङ्कारयुक्ताभ्यां स्नानं ह्यवभृथाह्वयम् ॥८४॥
चकार कथितोत्साहैः पूर्ववच्च सविस्तरम् । अथ यज्ञशतं पूर्णमेवं कृत्वा रघूत्तमः ॥८५॥
जातकर्मादिसंस्कारान् लवस्य विधिनाऽकरोत् । चकार नानादानानि देवान् संपूज्य भक्तितः ॥८६॥
ततो मुनीश्वरान् पूज्य पूजयामास पार्थिवान् । जनकं च सुमेधां च पूजयामास राघवः ॥८७॥
विससर्ज ऋषीन्सर्वान् ऋत्विजो ये समागताः । द्विजाद्यास्तान् धनाद्यैश्च तोषयामासुरादरात् ॥८८॥
ततो विसृज्य विप्रांश्च पार्थिवैः सह राघवः । कुमाराभ्यां सीतया च बन्धुभिश्चागमत्पुरीम् ॥८९॥
नीराजितः पुरस्त्रीभिर्वारणस्थो रघूत्तमः । सीतया तनयाभ्यां च ययौ निजगृहं प्रति ॥९०॥
तदा महोत्सवश्चासीदयोध्यायां समन्ततः । चिरकालेन वैदेह्या दर्शनं च जनैः कृतम् ॥९१॥
ततो नृपादिकान् पूज्य विससर्ज रघूद्वहः । जनकं च सुमेधां च ददावाज्ञां निजां पुरीम् ॥९२॥
ततः सीतायुतो रामः पुत्राभ्यां बन्धुभिः सह । पूर्ववत्स सुखं रेमे चिरकालं रघूद्वहः ॥९३॥
रामेण सीतया सार्धं सहस्राणि त्रयोदश । वर्षाण्यत्र कृतं राज्यं कस्मिन्कल्पे द्विजोत्तम ॥९४॥
एकादश सहस्राणि वत्सराणि महान्ति च । तथैकादश वर्षाणि मासा एकादशैव तु ॥९५॥
दिनान्येकादशैवात्र रामेण सीतया सह । अयोध्यायां कृतं राज्यं कस्मिन्कल्पे द्विजोत्तम ॥९६॥
एकादश सहस्राणि चैकादश दिनानि च । सप्तद्वीपवतीपालो रामोऽभूत् कल्पभेदतः ॥९७॥
दशवर्षसहस्राणि दशवर्षशतानि च । रामेण सीतया राज्यं कस्मिन्कल्पे कृतं द्विज ॥९८॥

इति श्रीशतकोटिरामचरितांतर्गते श्रीमदानन्दरामायणे वाल्मीकीये
जन्मकांडे जानकीग्रहणं नामाष्टमः सर्गः ॥ ८ ॥

वेश्याओंने नृत्य किया और बन्दीजनों तथा मागधोंने विविध प्रकारसे स्तुति की ॥ ८० ॥ जाह्नवीके दक्षिणी तटपर जहाँ सीताने शपथ ली थी, वह सीताकुण्डके नामसे एक विख्यात तीर्थ बन गया ॥ ८१ ॥ सीताके उष्ण उच्छ्वास निकलनेके कारण आज भी वहां अग्निके सदृश तपता हुआ पवित्र जल निकलता रहता है ॥८२॥ इस जानकीकुण्डके स्मरणमात्रसे सब भय नष्ट हो जाते हैं। अपने पतिकी आयुवृद्धिके लिए स्त्रियोंको इसमें स्नान करना चाहिये ॥ ८३ ॥ इसके बाद सीता तथा अपने पुत्रोंके साथ रामने यज्ञान्तका अवभृथ स्नान किया। यह अवभृथ स्नान भी पूर्वकथित स्नानके सदृश ही उत्साहके साथ हुआ। इस प्रकार रामने सौ यज्ञ पूर्ण करके विधिपूर्वक लवका जातकर्मादि संस्कार किया। अनेक प्रकारके दान दिये और देवताओंका विधिवत् पूजन किया। इसके अनन्तर यज्ञमें आये हुए समस्त ऋषियों तथा राजाओंकी पूजा की और जनक तथा सुमेधाका भी पूजन किया। इसके बाद ऋषियों तथा ऋत्विजोंको धनादिसे सन्तुष्ट करके विदा किया ॥ ८४-८८ ॥ साथ ही ब्राह्मणों तथा राजाओंको भी विदा किया और सीता, पुत्रों तथा बन्धु-बान्धवोंके साथ राम अपनी अयोध्यापुरीको गये ॥८९॥ अयोध्यामें ज्यों ही राम हाथीपर सवार होकर पहुँचे, त्यों ही नगरकी स्त्रियोंने उनकी आरती उतारी और सब लोग अपने महलोंमें गये। उस समय अयोध्यामें चारों ओर महान् उत्सव हो रहा था। बहुत दिनोंसे वियुक्त सीताका लोगोंने दर्शन पाया ॥ ९० ॥ ९१ ॥ कई दिनों बाद रामने जनक, सुमेधा तथा अन्य राजाओंका अपने-अपने नगर जानेकी आज्ञा दी ॥ ९२ ॥ इसके अनन्तर फिर पहलेके समान रामचन्द्रजी सीता तथा पुत्रोंके साथ आनन्दपूर्वक अयोध्यामें रहने लगे ॥ ९३ ॥ किसी कल्पमें रामने सीताके साथ तेरह हजार वर्ष तक राज्य किया, किसी कल्पमें ग्यारह हजार वर्ष तथा किसी कल्पमें ग्यारह हजार वर्ष ग्यारह मास और ग्यारह दिनतक राज्य किया ॥ ९४-९७ ॥ किसी कल्पमें रामने दस हजार दस सौ वर्ष तक राज्य किया है ॥ ९८ ॥ इति श्रीशतकोटिरामचरितांतर्गते श्रीमदानन्दरामायणे पं० रामतेजपाण्डेय-कृत'ज्योत्स्ना'भाषाटीकासहिते जन्मकाण्डे अष्टमः सर्गः ॥ ८ ॥

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

नवमः सर्गः

(रामादिके बालकोंका उपनयन-संस्कार)

श्रीरामदास उवाच

अथोर्मिला मांडवी च श्रुतकीर्तिः सहैव ताः । बभूवुरंतरात्किंचिदंतर्वत्न्यो महोदराः ॥ १ ॥
तासां चकार सीता सा कौतुकानि च सादरम् । तासां पुंसवनादीनि विविधानि रघूत्तमः ॥ २ ॥
आहूय पत्न्या जनकं कारयामास बन्धुभिः । दोहदान् पूरयामासुस्तासां पौरसुहृत्स्त्रियः ॥ ३ ॥
तासां सर्वान् समुत्साहानेवं कृत्वा रघूत्तमः । वस्त्रालंकारभूषाभिस्तोषयामास ताः सुखम् ॥ ४ ॥
अथोर्मिला सा तनयं सुषुवे परमोदयम् । ततः सा माण्डवी पुत्रं सुषुवे परमे दिने ॥ ५ ॥
ततः सा श्रुतकीर्तिश्च सुषुवे यमलौ सुतौ । कालांतरेणोर्मिलाया द्वितीयस्तनयोऽभवत् ॥ ६ ॥
तथाऽवरस्तु मांडव्याः पुत्रः कालांतरादभूत् । जातकर्मादिसंस्कारान् कृत्वा रामः पृथक् पृथक् ॥ ७ ॥
चकार गुरुणा विप्रैर्महोत्साहैर्यथाविधि । लक्ष्मणस्यांगदो ज्येष्ठश्चित्रकेतुः कनिष्ठकः ॥ ८ ॥
मांडव्याः पुष्करो ज्येष्ठः कनिष्ठस्तक्षनामकः । श्रुतकीर्त्याः सुबाहुश्च यूपकेतुः परः स्मृतः ॥ ९ ॥
एवं कृतानि नामानि गुरुणा विधिपूर्वकम् । एतेऽन्तरेण संजाताः काले काले क्रमेण च ॥१०॥
तेऽत्रैकत्र मया प्रोक्ताः संक्षेपेणांग त्वत्पुरः । सर्वेषां जन्मकालेषु सुराः सर्वे मुदान्विताः ॥११॥
वादयामासुर्वाद्यानि ववर्षुः पुष्पवृष्टिभिः । मातृभिः पितृभिर्युक्तान् बालकान् सूर्यसन्निभान् ॥१२॥
राजद्वारि महानासीदुत्सवश्च नृपाज्ञया । निनेदुर्नववाद्यानि ननृतुश्चाप्सरोगणाः ॥१३॥
वादयन्ति स्म तूर्याणि तुष्टुवुर्वन्दिमागधाः । नगरीं शोभयामासुः पताकाध्वजतोरणैः ॥१४॥
सुहृदः पार्थिवाः सर्वे रामादीनां च पूजनम् । वस्त्रैराभरणाद्यैश्च चक्रिरे ते पृथक् पृथक् ॥१५॥
ददुर्दानानि विप्रेभ्यो रामाद्या बंधवश्च ते । ब्राह्मणान् भोजयामासुः श्राद्धानि चक्रुरादरात् ॥१६॥

श्रीरामदास बोले–कुछ काल बाद उर्मिला, माण्डवी तथा श्रुतकीर्तिने साथ साथ गर्भ धारण किया ॥ १ ॥ सीताने इस समयपर बड़ी खुशियाली की और रामने विधिपूर्वक पुंसवनादि संस्कार किये ॥ २ ॥ इस संस्कारके समय जनक तथा सुमेधाको भी रामने बुलवा लिया और उन्हींके द्वारा यह कार्य सम्पन्न हुआ । पुरवासिनी स्त्रियोंने उर्मिलादिकी जो-जो इच्छा हुई, सो पूर्ण किया ॥ ३ ॥ रामने इस प्रकार उत्सव करके अनेक तरहके वस्त्र और आभूषण दिये ॥ ४ ॥ इसके बाद समय पूरा होनेपर उर्मिलाने एक परम तेजस्वी पुत्र उत्पन्न किया और दूसरे दिन माण्डवीके भी एक पुत्ररत्न उत्पन्न हुआ ॥ ५ ॥ इसके अनन्तर श्रुतकीर्तिके एक साथ दो पुत्र उत्पन्न हुए । कुछ दिनों बाद उर्मिलाने एक दूसरा पुत्र और उत्पन्न किया ॥ ६ ॥ इसी प्रकार कालांतरमें माण्डवीके भी एक और पुत्र हुआ । रामने अपने कुलगुरु वसिष्ठके साथ उन पुत्रोंका जातककर्मादि संस्कार किया । लक्ष्मणके ज्येष्ठ पुत्रका नाम अङ्गद और दूसरे बेटेका नाम चित्रकेतु पड़ा ॥ ७ ॥ ८ ॥ माण्डवीके ज्येष्ठ पुत्रका नाम पुष्कर तथा कनिष्ठका तक्ष नाम पड़ा । इसी तरह श्रुतकीर्तिके ज्येष्ठ पुत्रका नाम सुबाहु तथा कनिष्ठ बेटेका नाम यूपकेतु पड़ा ॥ ९ ॥ १० ॥ गुरु वसिष्ठने विधिपूर्वक सबका नामकरणादि संस्कार किया । हे शिष्य ! यहाँपर मैंने तुम्हें संक्षेपमें एक ही एक पुत्रका नाम बतलाया है । इनके सिवाय भी बहुतसे पुत्र हुए । प्रत्येक पुत्रके जन्मसमयपर देवतागण हर्षपूर्वक अपने बाजे बजाते और उनपर तथा उनके माता-पितापर पुष्पोंकी वृष्टि किया करते थे । रामचन्द्रजीके आज्ञानुसार राजद्वारपर बड़े-बड़े उत्सव रचाये जाते, नये-नये बाजे बजते और वेश्याएँ नृत्य करती थीं । बन्दीजन तथा सूत-मागध आ-आकर विविध प्रकारकी स्तुतियाँ किया करते थे । पताका-ध्वजा तथा तोरणादिकोंसे अयोध्या नगरीका शृङ्गार किया जाता था । रामके मित्र समस्त राजे अनेक प्रकारके वस्त्राभूषणोंको देकर उनका पूजन करते थे ॥ ११–१५ ॥ राम-लक्ष्मण आदि चारों भ्राता भी ब्राह्मणोंको दान देते, उन्हें भोजन कराते एवं नान्दीश्राद्धादि कृत्योंको

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

एवमष्टौ कुमारास्ते रामादीनां मनोरमाः । ववृधुश्चंद्रवदना मातृभिर्लालिताः सुखम् ॥१७॥
शृंखलाबद्धरुक्मादिनिर्मितेषु वरेषु च । प्रखेषु हि कुमारास्ते विरेजू रुक्मभूषिताः ॥१८॥
भाले स्वर्णमयाश्वत्थपर्णान्यतिमहान्ति च । मुक्ताफलाग्रलंबीनि शोभयंति स्म बालकान् ॥१९॥
कंठे रत्नमणिव्रातमध्यद्वीपिनखांचिताः । कर्णयोः स्वर्णसंपन्नरत्नार्जुनसुतालकाः ॥२०॥
सिंजानमणिमंजीरकटिसूत्रांगदैर्युताः । स्मितवक्त्राल्पदशना इंद्रनीलमणिप्रभाः ॥२१॥
अंगणे रिंगमाणाश्च संस्कारैः संस्कृताः शुभाः । ते पितॄन् रञ्जयामासुर्मातॄश्चापि विशेषतः ॥२२॥
नानाशिशुक्रीडनकैश्चेष्टितैर्मुखचुंबनैः । बालकृत्रिमयुद्धैश्च गमनैर्मधुरेरितैः ॥२३॥
ततस्ते बालकाः सर्वे वस्त्रालंकारभूषिताः । सभायां राघवं नत्वा तस्थुः सिंहासनोपरि ॥२४॥
एकदा राघवः प्राह वसिष्ठं सदसि स्थितम् । अवलोकय बालानां त्वं चिह्नानि यथाक्रमम् ॥२५॥
तच्छ्रुत्वा रामवचनं वसिष्ठो भूसुरैः सह । आदौ कुशं समाहूय दृष्ट्वा रामं वचोऽब्रवीत् ॥२६॥

वसिष्ठ उवाच

पंचसूक्ष्मः पंचदीर्घः सप्तरक्तः षडुन्नतः । त्रिपृथुर्लघुगंभीरो द्वात्रिंशल्लक्षणस्त्वयम् ॥२७॥
पंच दीर्घाणि शस्तानि यथा दीर्घायुषोऽत्र च । भुजौ नेत्रे हनुर्जानू नासा च तनयस्य ते ॥२८॥
ग्रीवाजंघामेहनैश्च त्रिभिर्ह्रस्वोऽयमीडितः । स्वरेण सत्त्वनाभिभ्यां त्रिगंभीरः शिशुः शुभः ॥२९॥
त्वक्केशांगुलिदशनाः पर्वाण्यङ्गुलिजान्यपि । तथाऽस्य पंच सूक्ष्माणि सूचयंति परां श्रियम् ॥३०॥
पाण्यंघ्रितलनेत्रांते तालुजिह्वाधरोष्ठकम् । सप्तारुणं च सनखमस्मिन् राज्यसुखप्रदम् ॥३१॥
वक्षः कुक्ष्यालिकस्कन्धकरवक्त्रं षडुन्नतम् । तथाऽत्र दृश्यते बाले महदैश्वर्यभोगभाक् ॥३२॥

किया करते थे। इस तरह रामादि चारों भ्राताओंके आठों कुमार—जिनका चन्द्रमाके समान मुखमण्डल था—माताओंसे लालित होकर बढ़ते जाते थे। सोनेके जंजीरोंसे बंधे हुए एवं तरह-तरहके रत्नोंसे सुसज्जित पालनोंपर वे आनन्दकी किलकारियाँ भरा करते थे ॥ १६ ॥ उन बच्चोंको कितने ही प्रकारके स्वर्णमय आभूषण पहनाये जाते और माथेपर पीपलके पत्तेकी नाईं सुवर्णका पत्ता बनाकर लगाया जाता था। जिसमें छोटे-छोटे मोतियोंके झुब्बे लटकते हुए बड़े भले लगते थे ॥ १७ ॥ १८ ॥ गलेमें रत्नों और मणियोंके समूहके बीचमें व्याघ्रका नख शोभायमान हो रहा था। कानोंमें सुवर्णके कुण्डल झूलते रहते थे और उनमें लगा हुआ हीरा प्रकाशित हो रहा था ॥ १९ ॥ २० ॥ रुनझुन करती हुई मणियोंकी करधनी पड़ी थी। हाथोंमें कङ्कण तथा बिजायठ अपना असाधारण निखार दिखा रहा था। जिस समय वे बच्चे तनिक मुस्करा देते तो इन्द्रनीलमणिके समान उनके छोटे-छोटे दाँत दीखने लगते थे। हाथ और पैरके सहारे आँगनमें रेंगते हुए वे बालक नाना प्रकारके बालविनोद, तरह-तरहकी चालें, मुखचुम्बन, बालकोंमें कृत्रिम युद्ध और मीठी-मीठी बोलोंसे अपने-अपने माता-पिताको आनन्दित करते रहते थे। कुछ दिनों बाद वे अच्छे-अच्छे वस्त्राभूषण पहिनकर राजसभामें जाते और वहाँ नियमतः रामचन्द्रको प्रणाम करके अपने आसनपर बैठ जाते थे ॥ २१–२४ ॥ एक दिन राजसभामें बैठे हुए वसिष्ठजीसे रामने कहा—आप कृपया इन बालकोंका शुभाशुभ लक्षण देखकर हमें बतलाइए। यह बात सुनकर वसिष्ठने सबसे पहले कुशको अपने सामने बुलाया और रामसे कहने लगे—॥ २५ ॥ २६ ॥ पाँच प्रकारके लक्षण सूक्ष्म, पाँच ही तरहके दीर्घ, सात रक्त, छः उन्नत, तीन विस्तृत, तीन ही तीन लघु तथा तीन गंभीर सब मिलाकर ३२ प्रकारके लक्षण होते हैं ॥ २७ ॥ जैसे कि इस चिरंजीवी कुशके हाथ, नेत्र, बाहु, घुटने, नाक ये पाँच दीर्घ हैं। अतएव ये बहुत अच्छे हैं। ग्रीवा, जंघा और लिंग इन तीनोंके छोटे होनेसे इसके तीन ह्रस्व हैं। ये भी अच्छे हैं। शब्द, बल तथा नाभि ये तीन गंभीर हैं। इसकी त्वचा, केश, उँगलियाँ, दाँत, शरीरकी संधियाँ तथा नख ये पाँच सूक्ष्म इसकी श्रीकी सूचना दे रहे हैं। हाथ, पैर, तलवे, नेत्रके आस-पासवाले भाग तथा तालु, जिह्वा, अधरोष्ठ और नख ये रक्तवर्णके होनेसे राज्यसुख देनेवाले हैं ॥ २८–३१ ॥ छाती, पेट, कन्धा,

CC0. In Public Domain. Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

ललाटकटिवक्षोभिस्त्रिविस्तीर्णो यथा ह्यसौ । सर्वतेजो महैश्वर्यं तथा प्राप्स्यति नान्यथा ॥३३॥
अच्छिन्नां तर्जनीं प्राप्य तथा रेखाऽस्य दृश्यते । कनिष्ठामूलनिर्याता दीर्घायुष्यं यया भवेत् ॥३४॥
कमठपृष्ठकठिनावकर्मकरणौ करौ । राज्यहेतू शिशोरस्य पादौ चाध्वनि कोमलौ ॥३५॥
पादौ समांसलौ रक्तौ समौ सूक्ष्मौ सुशोभनौ । समगुल्फौ स्वदेहेन स्निग्धावैश्वर्यसूचकौ ॥३६॥
स्वल्पाभिः कररेखाभिश्चारक्ताभिः सदा सुखी । लिंगेन कृशह्रस्वेन राजराजो भविष्यति ॥३७॥
उत्कटासनगुल्फस्फिङ्नाभिरस्यापि वर्तुला । दक्षिणावर्तमरुण महदैश्वर्यसूचकम् ॥३८॥
धारैका मूत्रके यस्य दक्षिणावर्तिनी यदि । गंधश्च मीनमधुनोर्यदि वीर्यं तदा नृपः ॥३९॥
विस्तीर्णौ मांसलौ स्निग्धौ भुजावस्य सुखोचितौ । वामावर्तौ सप्रलंबौ भुजौ भूरक्षणोचितौ ॥४०॥
श्रीवत्सवज्रचक्राब्जमत्स्यकोदंडदंडभृत् । तथाऽस्य करगा रेखा यथा स्यात्त्रिदिवस्पतिः ॥४१॥
द्वात्रिंशद्दशनश्चायं वरकंबुशिरोधरः । क्रौंचदुदुभिहंसाभ्रस्वरः सर्वेश्वराधिकः ॥४२॥
मधुपिंगलनेत्रोऽसौ नैनं श्रीस्त्यजति क्वचित् । पंचरेखाललाटस्तु तथा सिंहोदरः शुभः ॥४३॥
ऊर्ध्वरेखांकितपदो निःश्वसन्पद्मगन्धवान् । अच्छिद्रपाणिः सुनसो महालक्षणवानयम् ॥४४॥
एवं कुशं निरीक्ष्याथ सर्वान् दृष्ट्वा क्रमेण सः । लवादीनां सुचिह्नानि पूर्ववत्प्राह राघवम् ॥४५॥
ततः प्रीतमना रामः पूजयामास तं गुरुम् । वस्त्रैराभरणैश्चैव ययौ हर्षात्ततो गृहम् ॥४६॥
एतस्मिन्नंतरे सीता भूमिदत्तवरासने । संस्थिता चामरैर्दिव्यैर्दासीभिः परिवीजिता ॥४७॥
सखीभिः सेविता रम्या धृताधोंकोपबर्हणा । मुकुरे स्वं निरीक्षंती मुखं चन्द्रनिभं वरम् ॥४८॥

हाथ, पसलियाँ और मुँह ये छः उन्नत दीखते हैं, जो महान् ऐश्वर्यभोगके दाता हैं ॥३२॥ मस्तक, कमर और छाती ये तीन विस्तीर्ण हैं, जो सब ऐश्वर्योंको देनेवाले हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है ॥ ३३ ॥ हाथकी एक रेखा ठीक तर्जनी पर्यन्त चली गयी है, वह दीर्घायुसूचक है ॥ ३४॥ कछुईकी पीठके समान कड़े-कड़े इसके हाथ राज्यप्राप्तिकी सूचना दे रहे हैं। इसके कोमल, बरावर, लाल, पतले, सुन्दर और बराबर एंडीवाले पैर भी इसके राज्यप्राप्तिकी सूचना दे रहे हैं ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ थोड़ी और लाल रङ्गकी रेखाएँ यह बतलाती हैं कि यह सदा सुखी रहेगा। इसका लिंग पतला और छोटा है। इससे यह जाना जाता है कि यह बच्चा भविष्यमें राजाओंका भी राजा होगा। इसका नितम्ब तथा घुटने मजबूत हैं और नाभि गहरी तथा सक्षिणावर्त होकर लाल रङ्गकी है। ये सब भी महान् ऐश्वर्यकी सूचना दे रहे हैं। लक्षणशास्त्रोंमें कहा गया है कि मूत्रत्यागके समय जिसके लिंगसे मूत्रकी केवल एक बार दक्षिणावर्त बहे और उसके वीर्यसे मछली तथा शहदके समान गन्ध निकले तो वह मनुष्य राजा होता है ॥ ३७–३९ ॥ इसकी बड़ी, मोटी और चिकनी भुजाएँ सुख भोगने लायक हैं। लम्बे और वामावर्त बाहुदण्ड पृथ्वीकी रक्षा करनेके योग्य हैं ॥ ४० ॥ श्रीवत्स, वज्र, चक्र, कमल, मत्स्य, धनुष तथा दण्ड आदिके आकारकी ऐसी रेखाएँ इसके हाथोंमें पड़ी हैं, जिससे ज्ञात होता है कि यह देवताओंका भी राजा होगा ॥ ४१ ॥ इसके मुखमें पूरे बत्तीस दाँत हैं। शङ्खके समान सुन्दर इसकी ग्रीवा है। क्रौंच पक्षी, नगाड़ा, हंस तथा मेघके समान गम्भीर इसका स्वर है। इससे जान पड़ता है कि यह संसारके समस्त राजाओंसे बढ़कर होगा ॥ ४२ ॥ मधु (शहद) के समान पिंगल वर्ण इसकी आँखें हैं, इसके ललाटमें पाँच रेखाएँ हैं, सिंहके समान उदर है, इसके पैरोंकी रेखाएँ ऊपरको गयी हैं, इसके श्वाससे कमलकी गन्ध आती है और सुन्दर-सी नासिका है, इन सब लक्षणोंसे ज्ञात होता है कि यह असाधारण लक्षणसम्पन्न बालक है ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ इस प्रकार कुशके लक्षणोंको बतलाकर वसिष्ठने बाकी लव आदि बालकोंके भी लक्षण बतलाये। तदनन्तर रामने अनेक प्रकारके वस्त्रों और आभूषणोंसे वसिष्ठकी पूजा की और उनकी आज्ञा लेकर रामचन्द्रजी अपने महलमें चले गये ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ वहाँ सीताजी पृथ्वीके दिये हुए सुन्दर सिंहासनपर बैठी थीं। कितनी ही दासियाँ चँवर-पंखे आदि झल रही थीं। बहुत-सी सखियें तरह-तरहकी सेवामें लगी थीं। उस समय सीताजी पीछे तकिया लगाकर बैठी हुई दर्पणमें अपना मुख देख रही थीं। जब उन्होंने सुना कि

CC-0. In Public Domain. Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

रामस्यागमनं श्रुत्वा संचचालासनाज्जवात् । ततो ददर्श श्रीरामं बालकैः परिवेष्टितम् ॥४९॥
स्वकट्यां यूपकेतुं च दधानमवरं शिशुम् । तथैव दक्षिणे हस्ते दधानं चांगदं शुभम् ॥५०॥
कुशं लवं पुरस्कृत्य सभायां तं शनैः शनैः । तत्पृष्ठे सा ददर्शाथ लक्ष्मणं बालकान्वितम् ॥५१॥
तक्षं कट्यां पुष्करं च दधानं दक्षिणे करे । तत्पृष्ठे भरतं सीता ददर्श मुदितानना ॥५२॥
चित्रकेतुं शिशुं कट्यां दधानं रुक्ममण्डितम् । तथैव दक्षिणे हस्ते सुबाहुं पंकजेक्षणम् ॥५३॥
तत्पृष्ठे सा ददर्शाथ शत्रुघ्नं जनकात्मजा । रामशस्त्राणि बिभ्रतं समायांतं शनैः शनैः ॥५४॥
एवं सा राघवं दृष्ट्वा सीता प्रत्युज्जगाम तम् । शिंजन्मंजीररशना पीतकौशेयधारिणी ॥५५॥
कराभ्यां पुरतो यांतं लवं धृत्वा चुचुंब सा । निधाय तं लवं कट्यां धृत्वा हस्तेन तं कुशम् ॥५६॥
ययौ शनैः सा रामेण वदती स्वस्थलं पुनः । सखीभिर्वेष्टिता सीता रंजयामास राघवम् ॥५७॥
अथ रामोऽपि सीतायाः स्थित्वा सिंहासनोपरि । अंकयोः पुरतश्चापि बालकान्सस्थितांश्च सः ॥५८॥
सीतायै दर्शयन् प्रीत्या लालयामास सादरम् । सीतायै राघवः प्राह सभायां गुरुणा पुरा ॥५९॥
यान्युक्तानि सुचिह्नानि शिशूनां तानि विस्तरात् । श्रुत्वा राममुखात्तानि सीता तोषं परं ययौ ॥६०॥
राघवः प्राह वैदेहीमुर्मिलापरिवीजिताम् । सीतेऽङ्गदं चित्रकेतुं लक्ष्मणांके निवेशय ॥६१॥
तद्रामवचनं श्रुत्वा सीता शीघ्रं शिशू ययौ । तावदुत्थाय सौमित्रिर्लज्जया गंतुमुद्यतः ॥६२॥
तं गन्तुकामं रामोऽपि दृष्ट्वा तां मांडवीं तथा । श्रुतकीर्तिं कंजनेत्रसंज्ञयाऽचोदयत्तदा ॥६३॥
ताभ्यां धृतोऽथ सौमित्रिः स्मितास्याभ्यामुपाविशत् । तावत्तदंकयोः सीता तत्पुत्रौ सन्न्यवेशयत् ॥६४॥
तद्वच्च भरतस्यांके निवेश्य तक्षपुष्करौ । शत्रुघ्नांके सुबाहुं च यूपकेतुं न्यवेशयत् ॥६५॥
ततः सीतां पुनः प्राह स्मितास्यः स रघूद्वहः । बीजयंतूर्मिलाद्याश्च स्वं स्वं स्वामिनमादरात् ॥६६॥

राम आ रहे हैं तो आसनसे उठ खड़ी हुई। उधरसे राम भी बालकोंके साथ सीताके समक्ष आगये ॥ ४७–४९ ॥ उस समय वे अपनी बायीं गोदमें यूपकेतु तथा दाहिनी गोदमें अंगदको लिये हुए थे और लव-कुश आगे-आगे चल रहे थे। उनके पीछे बालकोंको लिये लक्ष्मणको भी आते हुए सीताने देखा ॥ ५० ॥ ५१ ॥ लक्ष्मण तक्षको गोदमें लिये थे और पुष्करको अपने दहिने हाथकी उँगली पकड़ाये चले आ रहे थे। उनके बाद सीताने भरतको आते देखा ॥ ५२ ॥ वे भी चित्रकेतु नामक बच्चेको बायीं गोदमें लिये और दाहिनी गोदमें कमलकी नाईं आँखोंवाले सुबाहु नामक बेटेको लिये हुए थे ॥ ५३ ॥ उनके पीछे सीताने शत्रुघ्नको देखा। वे रामजीके शस्त्रोंको लिये धीरे-धीरे महलोंकी ओर आ रहे थे ॥ ५४ ॥ इस प्रकार उन्हें आते देखकर सीता रामकी ओर बढ़ीं। कमरकी करधनी और क्षुद्रघंटिका अपनी रुनझुनकी ध्वनि कर रही थी और शरीरमें रेशमी पीताम्बर सुशोभित हो रहा था ॥ ५५ ॥ उन्होंने रामके पास पहुँचते ही लवका मुख चूमा। फिर गोदमें उठा लिया और कुशको दाहिने हाथकी उँगली पकड़ाकर रामसे बातें करती हुई चलीं। उस समय भी चारों ओरसे कितनी ही सखियाँ घेरकर सीता तथा रामको प्रसन्न करती हुई चल रही थीं ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ इसके अनन्तर रामचन्द्रजी सीताके सिंहासनपर बैठ गये और बच्चोंको गोदमें लेकर खेलाने लगे। कुछ देर बाद रामचन्द्रजीने सीताको वसिष्ठसे सुने हुए बालकोंके शुभ लक्षण कह सुनाये। जिन्हें सुनकर सीता बहुत प्रसन्न हुईं ॥ ५८–६० ॥ उर्मिला सीताके ऊपर पंखा झल रही थीं। इसी समय रामने सीतासे कहा कि अङ्गद और चित्रकेतुको ले जाकर लक्ष्मणकी गोदमें बिठा दो ॥ ६१ ॥ रामकी यह बात सुनकर सीता झटपट बच्चोंके पास पहुँचीं और उन्हें लक्ष्मणकी गोदमें बिठलाना ही चाहती थीं कि लक्ष्मण लज्जाके मारे चलनेको तैयार हो गये ॥ ६२ ॥ लक्ष्मणको जाते देखकर रामने आँखोंसे संकेत कर दिया, जिससे श्रुतिकीर्ति और माण्डवीने लक्ष्मणको पकड़ लिया। तभी सीताने उन दोनों बच्चोंको लक्ष्मणकी गोदमें बिठा दिया ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ उसी प्रकार भरतकी गोदमें तक्ष और पुष्कर तथा शत्रुघ्नकी गोदमें सुबाहु और यूपकेतुको बिठलवाया ॥ ६५ ॥ इसके बाद मुस्कराते हुए रामचन्द्रने

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

ततस्ता दुद्रुवुः सर्वाः सखीभिर्लज्जिता धृताः । व्यजनैर्वीजयामासुः स्वं स्वं कांतं सुलज्जिताः ॥६७॥
एवं नानाकौतुकानि भोजनासनकर्मसु । कारयामास वैदेह्या बंध्वादीनां रघूत्तमः ॥६८॥
अथ रामो वसिष्ठं स एकदा वाक्यमब्रवीत् । कुशस्याथ लवस्यापि व्रतबन्धो विधीयताम् ॥६९॥
तथेति गुरुणा प्रोक्तस्ततो रामः शुभे दिने । गणकान् स समाहूय मंत्रयामास सादरम् ॥७०॥
कुशाय पंचमं वर्षं किंचिन्न्यूनं लवाय च । ज्ञात्वा ते गणकाः सर्वे गुरुशुक्रादिकं बलम् ॥७१॥
दृष्ट्वा पंचांगपट्टेषु राघवं वाक्यमब्रुवन् । ब्राह्मणस्याष्टमे प्रोक्तो द्वादशे क्षत्रियस्य च ॥७२॥
वैश्यस्य षोडशे वर्षे व्रतबंधो मुनीश्वरैः । जन्मात् षष्ठे तथा गर्भात्सप्तमेऽब्दे नृपस्य च ॥७३॥
व्रतबंधो विधातव्यो यत्नतश्च बलार्थिनः । ब्रह्मवर्चसकामस्य कार्यो विप्रस्य पंचमे ॥७४॥
राज्ञो बलार्थिनः षष्ठे वैश्यस्यार्थार्थिनोऽष्टमे । विद्वद्भिश्चोपनयनमेवं शास्त्रेषु निर्णयः ॥७५॥
अतो गर्भाच्च षष्ठेऽब्दे पुत्रयोस्त्वं रघूत्तम । सुखं कुरूपनयनं मुहूर्तं श्रृणु सादरम् ॥७६॥
अद्यारभ्य पंचदशदिने दत्तं कुशाय हि । पक्षांतरेण तं श्रुत्वा मुहूर्तं रघुनंदनः ॥७७॥
गणकान् धनवस्त्राद्यैः पूज्य लक्ष्मणमब्रवीत् । आकारणीया राजानः सुहृदश्च मुनीश्वराः ॥७८॥
सांतःपुराः सपौराश्च स्वस्वजानपदैः सह । श्रृङ्गारणीयाऽयोध्येयं परिखाः सप्त सादरम् ॥७९॥
शोधनीयास्तथा सौधसमूहेषु सुधाः शुभाः । दत्त्वा चित्राणि लेख्यानि प्रासादेषु समंततः ॥८०॥
देवालयेषु सर्वेषु सुधा देया मनोरमा । लेखनीयानि चित्राणि स्थाप्यंतां बलयः पृथक् ॥८१॥
बंधनीयाः पताकाश्च रोपणीया ध्वजा अपि । समंततस्तोरणानि बंधनीयानि लक्ष्मण ॥८२॥

सीतासे कहा–अब उर्मिला, श्रुतकीर्ति तथा माण्डवी अपने-अपने पतियोंको पंखा झलें ॥ ६६ ॥ इस बातको सुनकर वे स्त्रियाँ लज्जाके मारे वहाँसे भाग खड़ी हुईं । किन्तु सखियाँ दौड़कर उन्हें पकड़ लायीं और अन्तमें उन्हें रामके आज्ञानुसार अपने-अपने पतियोंपर पंखे झलने पड़े ॥ ६७ ॥ इस तरह भोजन, आसन तथा शयनके समय रामचन्द्रजी सीता तथा भ्राताओंके साथ विविध प्रकारके कौतुक किया करते थे ॥ ६८ ॥ कुछ दिन बीतनेपर एक दिन वसिष्ठसे रामने कहा—अब कुश और लवका व्रतबन्ध (यज्ञोपवीत-संस्कार) कर डालना चाहिए ॥ ६९ ॥ वसिष्ठने कहा–अच्छी बात है । एक पवित्र दिवसको रामने बहुतसे ज्योतिषियोंको बुलाकर सलाह की ॥ ७० ॥ जब ज्योतिषियोंको यह बात मालूम हुई कि कुशका पाँचवाँ वर्ष चल रहा है और लवका कुछ कम है । तब उन्होंने गुरु-शुक्रादिका बलाबल देखा ॥ ७१ ॥ पञ्चांगमें सब देख-सुनकर उन्होंने रामसे कहा–ब्राह्मणका उपनयन आठवें वर्षमें, क्षत्रियका बारहवें वर्षमें और वैश्यका सोलहवें वर्षमें यज्ञोपवीत-संस्कार होना चाहिए। यह बड़े-बड़े ऋषियोंने कहा है । अपना वर्चस्व बढ़ानेकी इच्छा रखनेवाले विप्रको गर्भसे पाँचवें वर्षमें, बलवृद्धिकी कामनावाले राजाको छठें वर्षमें एवं धनवृद्धिकी इच्छा रखनेवाले वैश्यको आठवें वर्षमें ही उपनयन-संस्कार करना उचित है । यह शास्त्रोंका निर्णय है ॥ ७२–७५ ॥ अतएव हे रघूत्तम ! आपके बच्चोंका गर्भसे लेकर यह छठां वर्ष चल रहा है। इसलिए इस समय इनका व्रतबन्ध करना अतिशय श्रेयस्कर है। अब बच्चोंके व्रतबन्धके लिए सुन्दर मुहूर्त बतलाता हूँ, सो सुनिए ॥ ७६ ॥ आजसे पन्द्रहवें दिन कुशके यज्ञोपवीतका पवित्र मुहूर्त मिलता है। इस प्रकार एक पक्षके बाद यज्ञोपवीतका मुहूर्त सुनकर रामचन्द्रजीने अनेक प्रकारके धन-वस्त्रसे उन गणकोंकी पूजा की और लक्ष्मणसे कहा कि समस्त राजाओं, मित्रों तथा मुनियोंके पास निमन्त्रण भेजकर कहला दो कि सब लोग अपनी स्त्रियों, पुरवासियों तथा देशवासियोंके साथ इस उपयनसंस्कारके उत्सवमें मेरे यहाँ पधारें । इस अयोध्या नगरीको अच्छी तरह सजवाओ। इसके आस-पासकी सातों खाइयोंको साफ करवा दो ॥ ७७–७९ ॥ महलोंको चूनेसे पुतवा दो। अटारियों और दीवारोंपर नाना प्रकारके चित्र बनवाओ। अयोध्याके समस्त देवालयोंको चूनेसे पुतवाकर उनमें नाना प्रकारकी चित्रकारियाँ करवाओ और ... ॥ ८० ॥ ... ॥ ८१ ॥ चारों ओर पताका

CC-0. In Public Domain. Kartikay Sharma, Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

वेद्यः कार्या रुक्ममय्यो बन्धनीयाश्च मंडपाः । शृङ्गारणीया हस्त्यश्वशिबिकाश्च सहस्रशः ॥८३॥
अन्यच्चापि यथायोग्यं यद्यज्जानासि लक्ष्मण । तत्तत्कुरुष्व यन्नोक्तं मया तव रघूत्तम ॥८४॥
तद्रामवचनं श्रुत्वा तथेत्युक्त्वा स लक्ष्मणः । तथा चकार तत्सर्वं यथा रामेण शिक्षितः ॥८५॥
ततो मुहूर्ते श्रीरामः स्नानमभ्यंगपूर्वकम् । कृत्वा कुमारैर्वैदेह्या बंधुस्त्रीभिश्च बंधुभिः ॥८६॥
नानालंकारवस्त्राणि परिधायाथ तैः सह । पुण्याहवाचनं चक्रे गुरुं पूज्य ऋषीश्वरान् ॥८७॥
नांदीश्राद्धादिकं कृत्वा प्रतिष्ठां दैवतस्य च । चकार मंगलैस्तूर्यनादैः सीतासमन्वितः ॥८८॥
ततो ययुः कोटिशस्ते पार्थिवाश्च मुनीश्वराः । सप्तद्वीपांतरस्थाश्च सावरोधाः सवाहनाः ॥८९॥
तैः साऽयोध्या तदा व्याप्ता विरेजे नितरां तदा । ततो मुहूर्तदिवसे वसिष्ठो ब्राह्मणैर्युतः ॥९०॥
रामस्याथ कुशस्याथ मध्ये धृत्वा वरं पटम् । उवाच मंगलान्येव सुस्वरैर्मधुराक्षरैः ॥९१॥

ध्यात्वा श्रीगणनायकं विधिसुतां शंभुं विधिं माधवं
लक्ष्मीं शैलसुतां विधेस्तु दयितामिंद्रं सुरांस्तान् ग्रहान् ।
पुण्यान्स्थावरनिम्नगाश्च सुमुनीन् स्वीयां कुलस्यांबिकां
तातं मातरमादरेण वटवे भूयात्सदा मंगलम् ॥९२॥

तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तदेव ।
विद्याबलं दैवबलं तदेव सीतापतेर्यत्स्मरणं विधेयम् ॥९३॥

इति नानामंगलाद्यैस्तूर्यघोषैर्मनोहरैः । ॐकारघोषैः स गुरुर्मुमोचांतःपटं तदा ॥९४॥
ततस्तं राघवस्याङ्के निवेश्य हवनादिकम् । विधिं कृत्वाऽथ कौपीनं दण्डं चाथ कमण्डलुम् ॥९५॥
बद्ध्वादौ रुक्मजां मौंजीं बबन्धैणाजिनं तदा । ततः कुशाय स गुरुर्गायत्रीमुपदिष्टवान् ॥९६॥
ब्रह्मचर्यव्रतादीनि स कुशायोपदिष्टवान् । कृत्वोक्तविधिना शौचं कुर्यादाचमनं तथा ॥९७॥

लगवाओ और जगह-जगहपर ध्वजा आरोपित करो । सुवर्णकी वेदियाँ बनवायी जायँ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ इनके सिवाय भी जो-जो बातें तुम्हें मालूम हों और मैंने न बतलायी हों, उन्हें भी ठीक कर देना ॥ ८४ ॥ इस प्रकार रामकी बात सुनी तो 'जो आज्ञा' ऐसा कहकर लक्ष्मण चले गये और रामने जैसा बतलाया था, वह सब प्रबन्ध कर दिया ॥ ८५ ॥ जिस दिन मुहूर्त था, उस रोज उबटन लगाकर उन कुमारों तथा सीता और भाइयोंके साथ रामने स्नान किया। नाना प्रकारके वस्त्र-अलंकारादि पहने । वसिष्ठ तथा निमन्त्रणमें आये हुए ऋषियोंका पूजन करके पुण्याहवाचन, नान्दीश्राद्ध, देवताओंकी स्थापना आदि कार्य तुड़ही और नगाड़ेके मंगलमय निनादके साथ राम तथा सीताने सम्पादित किये ॥ ८६–८८ ॥ इसके बाद सातों द्वीपोंके करोड़ों राजे तथा ऋषि अपने-अपने परिवार एवं वाहनोंके साथ वहाँ आ पहुँचे । उन लोगोंसे सारी अयोध्या भरकर बड़ी सुन्दर मालूम पड़ने लगी । यज्ञोपवीत-मुहूर्तके अवसरपर बहुतसे ब्राह्मणोंके साथ वसिष्ठजी राम और कुशके मध्यमें एक सुन्दर कपड़ेका पर्दा बाँधकर मीठे तथा स्पष्ट स्वरमें मङ्गलपाठ करने लगे ॥ ८९–९१ ॥ उन मङ्गलमय श्लोकोंका अर्थ इस प्रकार है-गणेश, सरस्वती, शिव, ब्रह्मा, विष्णु, लक्ष्मी, पार्वती, ब्रह्माणी, इन्द्र, समस्त देवता, सम्पूर्ण ग्रह, पवित्र पर्वत तथा नदियाँ, अच्छे-अच्छे ऋषि, अपनी कुलदेवी तथा माता-पिता इन सबको प्रणाम करके आपलोग प्रार्थना करें कि जिस बच्चेका यज्ञोपवीत संस्कार होनेवाला है, उसका कल्याण हो ॥ ९२ ॥ वही लग्न लग्न है, वही दिन दिन है, वही विद्याबल तथा देवबल है, जिसमें सीतापति रामचन्द्रका स्मरण किया जाय ॥ ९३ ॥ इस तरह विविध प्रकारके मङ्गलमय मन्त्रोंका पाठ करके गुरु वसिष्ठने ॐकार शब्दके साथ पर्दा खोल दिया । तदनन्तर वसिष्ठने लव-कुशको रामकी गोदमें बिठाकर हवनादि विधियोंको सम्पन्न किया । इसके अनन्तर कुशको सुवर्णके तारोंसे बनी करधनी पहनायी, मृगचर्म बाँधा और कौपीन पहनायी। फिर दण्ड-कमण्डलु देकर वसिष्ठजीने कुशको गायत्री-मंत्रका उपदेश दिया ॥ ९४–९६ ॥ फिर ब्रह्मचर्यव्रतके नियम आदि बतलाते हुए कहने लगे कि शास्त्रोंमें जो नियम बतलाये

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh,Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

पं० ... शास्त्री जहांगीराबाद २-२३६ बुलन्दशहर (उ०प्र०)

दन्तान् जिह्वां विशोध्याथ कृत्वा मलविशोधनम् । स्नात्वाऽम्बुदैवतैर्मन्त्रैः प्राणानायम्य यत्नतः ॥९८॥
उपस्थानं रवेः कृत्वा संध्ययोरुभयोरपि । अग्निकार्यं ततः कृत्वा ब्राह्मणानभिवादयेत् ॥९९॥
ब्रुवन्नमुकगोत्रोऽहमभिवादय इत्यपि । धारयन्मेखलां दण्डोपवीताजिनमेव च ॥१००॥
अनिंद्येषु चरेद्भैक्ष्यं ब्राह्मणेष्वात्मवृत्तये । वाग्यतो गुर्वनुज्ञातो भुञ्जीतान्नमकुत्सयन् ॥१०१॥
एकान्नं च समश्नीयाच्छ्राद्धेऽश्नीयात्तथाऽऽपदि । द्विवारं नैव भुञ्जीत दिवा क्वापि द्विजोत्तमः ॥१०२॥
सायंप्रातर्द्विजोऽश्नीयादग्निहोत्रविधानवित् । मधु मांसं प्राणिहिंसां भास्करालोकनं जले ॥१०३॥
स्त्रियं पर्युषितोच्छिष्टे परिवादं विवर्जयेत् । यथेष्टचेष्टो न भवेद्गुरोर्नयनगोचरे ॥१०४॥
न नाम परिगृह्णीयात्परोक्षेऽप्यविशेषणम् । गुरुनिंदा भवेद्यत्र परिवादस्तु यत्र च ॥१०५॥
श्रुती पिधाय स्थातव्यं यातव्यं वा ततोऽन्यतः ।
न मात्रा न पितुः स्वस्रा न स्वस्रैकान्तशीलता ॥१०६॥
वलवंतींद्रियाण्यत्र मोहयंत्यतिकोविदान् । एवमादान्यनेकानि ब्रह्मचारिव्रतानि हि ॥१०७॥
तस्मै गुरुश्चोपदिश्य ददौ दानान्यनेकशः । भोजयामास तं मात्रा सह नानोत्सवैस्तदा ॥१०८॥
कारयित्वाऽथ पालाशपूजनं विधिपूर्वकम् । तेनापि कुशवालेन देवकस्य विसर्जनम् ॥१०९॥
चकार राघवेणैव सीतया स गुरुस्तदा । ततो रामो नृपतिभिर्जनकेनापि पूजितः ॥११०॥
चकार धनवस्त्राद्यैस्तुष्टान् विप्रान्नृपादिकान् । आचांडालांस्तदा रामस्तोषयामास सादरम् ॥१११॥
एवं नानासमुत्साहैर्मासमेकं निनाय सः । रामो विसर्जयामास ततस्तान्पार्थिवादिकान् ॥११२॥
एवं कालांतराद्रामो व्रतबंधं लवस्य च । चकार पूर्ववद्धर्षात्समाहूय नृपादिकान् ॥११३॥

गये हैं, उनके अनुसार शौचसे निवृत्त होकर दाँत तथा जीभ साफ कर लेनेके बाद वरुण देवतासे सम्बन्ध रखनेवाले मन्त्रोंका पाठ करता हुआ स्नान करे। फिर आचमन-प्राणायामादि करके दोनों शामको सूर्यका उपस्थान करना चाहिये। इसके पश्चात् हवन करके ब्राह्मणोंको प्रणाम करे ॥ ९७-९९ ॥ प्रणाम करते समय यह भी कहता जाय कि अमुक गोत्रका अमुक व्यक्ति मैं आपको प्रणाम करता हूँ। उच्च जातिके लोगों अथवा जहाँतक हो सके, सुपात्र ब्राह्मणोंके यहाँसे भिक्षा माँगकर अपनी जीविका चलाये। किसीकी निन्दा न करे तथा मौनव्रतका पालन करे और जब गुरुकी अनुमति मिल जाय, तभी भोजन करे ॥ १०० ॥ १०१ ॥ सदा केवल एक अन्नका भोजन करे। श्राद्धादि तथा किसी आपत्तिमय कार्यके आ जानेपर भी दिनमें दो बार भोजन न करे। ब्राह्मणको चाहिये कि केवल सुबह-शाम भोजन करे। मधु तथा मांसका आहार, प्राणिहिंसा, जलमें सूर्यके प्रतिबिम्बका दर्शन, स्त्रीप्रसंग, बासी और जूठा भोजन तथा दूसरेकी निन्दा इन कामोंको छोड़ दे। गुरुके सामने अपने इच्छानुसार जो चाहे, सो न कर डाले ॥ १०२-१०४ ॥ परोक्षमें भी बिना विशेषण लगाये गुरुका नाम न ले। जहाँपर गुरुकी निन्दा हो रही हो अथवा उनकी ठठोली की जाती हो, वहाँ कान ढाँककर बैठे या वहाँसे उठ जाय। अपनी माता, बुआ अथवा बहिनके साथ भी एकान्तमें न बैठे ॥ १०५ ॥ १०६ ॥ क्योंकि इन्द्रियाँ बड़ी प्रबल होती हैं। वे बड़े-बड़े पण्डितोंको भी बातकी बातमें विचलित कर देती हैं। इस प्रकार गुरुने बहुतसे ब्रह्मचर्य व्रतसम्बन्धी नियम बतलाये ॥ १०७ ॥ इसके अनन्तर अनेक तरहके दान दिये गये। कुशको माताके साथ भोजन कराया गया ॥ १०८ ॥ तब विधिपूर्वक पलाशका पूजन कराया। फिर कुश, सीता तथा रामके द्वारा आहूत देवताओंका पूजन कराया ॥ १०९ ॥ इसके बाद बहुतसे राजाओं तथा जनकजीने रामका पूजन किया। रामने बहुतसे धन-वस्त्रों द्वारा आये हुए राजाओं तथा ब्राह्मणोंको प्रसन्न करके अयोध्यानिवासी चाण्डालसे लेकर ऊँचेसे ऊँचे कुल तकके लोगोंको सादर प्रसन्न किया ॥ ११० ॥ १११ ॥ इस तरह नाना प्रकारके उत्सवोंके साथ एक महीनेका समय बिताकर मेहमानीमें आये हुए राजाओं और ऋषियोंको विदा किया ॥ ११२ ॥ कुछ समय बीतनेके बाद उसी तरह उत्साहके

CC-0. In Public Domain. Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

ततस्तौ बालकौ रम्यौ वेदाध्ययनमुत्तमम् । चक्रतुर्गुरुसान्निध्ये विधिवद्द्विसत्तमौ ॥११४॥
एवं तेषां तु बालानां सर्वेषां रघुनंदनः । व्रतबंधविधानानि यथाकाले महोत्सवैः ॥११५॥
चकार गुरुणा विप्रैः समाहूय नृपादिकान् । विशेषैर्निजपुत्राभ्यां चकार स महोत्सवैः ॥११६॥
अकरोदधिकं किंचिन्न न्यूनमकरोद्विभुः । ततस्ते बालकाः सर्वे ब्रह्मचर्यव्रते स्थिताः ॥११७॥
चक्रुस्ते गुरुसान्निध्ये वेदाध्ययनमुत्तमम् । अथ रामोऽपि वैदेह्या बालकैः परिवारितः ॥११८॥
विरेजे स्कन्दगणपादिभिर्देव्या यथा शिवः । अथ ते बालकाः सर्वे कृत्वाऽध्ययनमुत्तमम् ॥११९॥
वेदादीनां गुरुमुखाल्लब्ध्वा ज्ञानं गुरोस्ततः । जग्मुस्तीर्थानि वै कर्तुं सेनया गुरुमंत्रिभिः ॥१२०॥
पृथिव्यां भारते खंडे यानि तीर्थानि तानि ते । कृत्वा समाययुः पंच मासैः स्वां नगरीं शनैः ॥१२१॥

बालान्समागतान् श्रुत्वा शोभयित्वा निजां पुरीम् ।
प्रत्युज्जगाम सौमित्रिः पुरस्कृत्याथ वारणम् ॥१२२॥

ते दृष्ट्वा लक्ष्मणं नेमुस्तेनालिंगिता अपि । नानोत्सवैर्ययुर्बाला अयोध्याया गृहं प्रति ॥१२३॥
मार्गे मार्गे पुरस्त्रीभिः सौधस्थाभिस्तु वर्षिताः । वृष्टिभिः कुसुमादीनां दीपैर्नीराजिता अपि ॥१२४॥
ततस्ते बालकाः सर्वे सभायां रघुनन्दनम् । नेमुस्तेनालिंगिताश्च ययुः सीतागृहं ततः ॥१२५॥
एतस्मिन्नन्तरे सीतोर्मिला सा मांडवी यथा । श्रुतकीर्तिश्च वेगेन चक्रुर्नीराजनं पृथक् ॥१२६॥
दध्योदनभवैर्दीपैः पक्वान्नैस्तैलपाचितैः । सर्षपैर्लवणैर्माषैस्तोयकुम्भैश्च सादरम् ॥१२७॥

ततस्ते बालकाः सर्वे नेमुः सीतां पृथक् पृथक् ।
ततो नेमुः स्वमातॄश्च पूर्वं नत्वा पितामहीः ॥१२८॥
ततस्ते बालकाः सर्वे ददुर्दानान्यनेकशः ।
ब्राह्मणान् भोजयामासुः कोटिशस्ते पृथक् पृथक् ॥१२९॥

साथ सब लोगोंको बुलाकर लवका यज्ञोपवीतसंस्कार किया ॥ ११३ ॥ फिर वे दोनों बालक गुरु वसिष्ठके पास विधिपूर्वक वेदाध्ययन करने लगे। इसी रीतिसे रामचन्द्रने समय-समयपर लक्ष्मण-भरत आदिके बच्चोंका भी व्रतबन्ध-संस्कार कराया और अपने लड़कोंसे बढ़कर उत्सव-दानादि किये। उसमें किसी प्रकारकी न्यूनता नहीं होने दी। वे बच्चे भी संस्कृत होकर विधिपूर्वक ब्रह्मचर्यके नियमोंका पालन करते हुए गुरुके पास वेदाध्ययन करने लगे। यह सब हो जानेके बाद सीता तथा पुत्रोंके साथ बैठे हुए रामचन्द्रजी पार्वती, गणेश तथा स्वामिकार्तिकेयके साथ बैठे शिवजीके सदृश सुन्दर लगते थे। इसके बाद जब उन बालकोंने अच्छी तरह विद्याध्ययन कर लिया तो एक विशाल सेना, गुरु तथा कितने ही मन्त्रियोंको साथ लेकर तीर्थयात्रा करनेको निकले ॥ ११४–१२० ॥ पृथ्वीके भरतखंडमें जितने तीर्थ हैं, उन्हें करके पाँच महीनेमें वे सब बालक अयोध्या वापस आ गये ॥ १२१ ॥ लक्ष्मणने जब सुना कि लड़के तीर्थयात्रासे अयोध्या लौट आये हैं तो बहुतसे गाजे-बाजे तथा हाथी-घोड़े साथ लेकर अगवानी करने गये ॥ १२२ ॥ जब उन्होंने लक्ष्मणको देखा तो मस्तक झुका-झुकाकर प्रणाम किया और लक्ष्मणने उनको अपनी छातीसे लगा-लगाकर आलिंगन किया। फिर अनेक प्रकारके उत्सवोंके साथ उनको महलोंमें ले चले। रास्तेमें अयोध्याकी नारियाँ अटारियोंपर चढ़-चढ़कर उनपर फूलोंकी वर्षा करतीं और आरती उतारती थीं। इसके बाद बालकोंने राजदरबारमें जाकर रामको प्रणाम किया और वहाँसे सीताके महलोंको गये। वहाँ पहुँचनेपर सीता, उर्मिला, मांडवी तथा श्रुतकीर्तिने अलग-अलग उन बालकोंकी आरती उतारी। पकवान, दही, भात, तेलके बने पकवान, सरसों, नमक, उड़द तथा पानी भरे कलश आदि ढरकाकर बलि दी गयी। इसके बाद उन सबोंने कौसल्या आदि तथा पिता और भाइयोंको प्रणाम करके सीता आदि माताओंको प्रणाम किया ॥ १२३–१२८ ॥ इसके बाद उन बालकोंने भाँति-भाँतिके दान दिये और अलग-अलग करोड़ों ब्राह्मणोंको भोजन कराया।

CC0. In Public Domain. Kritikant Sharma, Najafgarh Delhi Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

एवं नानोत्सवास्तत्र बभूवू रामसद्मनि । अथ ते बालकाः सर्वे स्यंदनादिषु संस्थिताः ॥१३०॥
दिव्यवस्त्राणि चित्राणि परिधाय समंततः । अयोध्याराजमार्गेषु हट्टेषु च चतुष्पथे ॥१३१॥
आरामोपवनारण्यवाटिकासु नदीतटे । गमनागमने चक्रुः सेनया मंत्रिबालकैः ॥१३२॥
एवं साकेतनगरे बालकैः सीतया सुखम् । रेमे स बंधुभिर्युक्तश्चिरं राजा रघूद्वहः ॥१३३॥
एवं शिष्य मया प्रोक्तं जन्मकांडमिदं तव । कुशादीनां च जन्मानि वर्णितान्यत्र विस्तरात् ॥१३४॥
रम्यं पवित्रमानंददायकं च मनोहरम् । पुत्रपौत्रप्रदं जन्मकांडमेतत्सुखावहम् ॥१३५॥

जन्मकांडमिदं पुण्यं ये शृण्वंति नरोत्तमाः ।
तेषां पुत्रैश्च पौत्रैश्च वियोगो न भविष्यति ॥१३६॥
जन्मकांडमिदं ये भक्त्या शृण्वंति मानवाः ।
तेषां स्त्रीणां वियोगो हि न कदाप्यत्र जायते ॥१३७॥

जन्मकांडमिदं पुण्यं याः शृण्वंत्यत्र वै स्त्रियः । स्वभर्तृभिर्वियोगं ता न गच्छंति यथा रमा ॥१३८॥
ग्रामं देशान्तरं तीर्थं ये गताश्च चिरं नराः । तेषामागमनार्थं हि जन्मकांड पठेदिदम् ॥१३९॥

येषां भावीनि कार्याणि लब्धुं त्वरयते मनः ।
तैर्नरैः पठनीयं वै जन्मकांडं दिने दिने ॥१४०॥
पूर्वे दिने चैकवारं द्विवारं चापरे दिने ।
एवं नवदिनं वृद्धिस्तथैकेन क्षयोऽपि हि ॥१४१॥
कार्यो नरैः स्वस्थचित्तैस्तेषां कार्यं भविष्यति ।
वर्षमेकं पठेदेवमपुत्रोऽपि लभेत्सुतम् ॥१४२॥
पुत्रार्थी प्राप्नुयात्पुत्रं धनार्थी धनमाप्नुयात् ।
इष्टान् कामांश्च कामार्थी जन्मकाण्डश्रवाल्लभेत् ॥१४३॥

इस तरह रामचन्द्रजीके भवनमें अनेक प्रकारके उत्सव हुए । वे सब रथ, हाथी, घोड़े आदि सवारियोंपर सवार हो-होकर बगीचे, उपवन, वन तथा नदीतट आदिपर अयोध्याके चौराहों तथा बाजारमें अनेक प्रकारके वस्त्र-आभूषण पहनकर मन्त्रियोंके लड़कोंके साथ आने-जाने लगे ॥ १२९–१३२ ॥ इस तरह उस साकेतपुरीमें उन बालकों तथा सीताके साथ आनन्दपूर्वक रामचन्द्रजी रहने लगे । हे शिष्य ! यह जन्मकाण्ड मैंने तुम्हें सुनाया । जिसमें कुश आदि बालकोंकी विस्तृत जीवनी वर्णित है ॥ १३३ ॥ १३४ ॥ यह जन्मकाण्ड परम रम्य, आनन्ददायक, मनोहर, सुख-सौभाग्यको देनेवाला और पुत्र-पौत्रादिका दाता है । जो लोग जन्मकाण्डको सुनते हैं, उनको कभी अपने पुत्रपौत्रादिके वियोगका दुःख नहीं उठाना पड़ता । जो लोग भक्तिपूर्वक इस जन्मकाण्डका श्रवण करते हैं, उनको अपनी स्त्रीका भी वियोग कभी नहीं होता । यदि स्त्रियाँ इसे सुनती हैं तो उन्हें अपने स्वामीसे कभी वियुक्त नहीं होना पड़ता । बल्कि लक्ष्मीके समान वे जन्मभर आनन्दसे अपना जीवन बिताती हैं ॥ १३५ ॥ १३६ ॥ यदि किसीके परिवारका कोई मनुष्य किसी तीर्थ या परदेशको चला गया हो तो उसे लौटानेके लिए इस जन्मकाण्डका पाठ करना चाहिए । जिसको अपना कोई भावी कार्य सिद्ध करना हो, उसको चाहिए कि पहले दिन एक बार, दूसरे दिन दो बार, तीसरे दिन तीन बार, इस क्रमसे बढ़ाते-बढ़ाते नवें दिन नौ बार जन्मकाण्डका पाठ करे । नवें दिनसे एक-एक पाठ घटाता हुआ फिर नवें दिन केवल एक पाठ करे । इस तरह यदि स्वस्थचित्तसे इसका पाठ किया जाय तो प्रत्येक कार्यकी सिद्धि हो सकती है । यदि इस विधिसे एक वर्ष पर्यन्त जन्मकाण्डका पाठ किया जाय तो पुत्रहीन व्यक्ति भी पुत्र प्राप्त कर सकता है ॥ १३७–१४२ ॥ कहनेका

CC0. In Public Domain. Kinkari Sharma Najafgarh Delhi Collection.

Digitized by Sarayu Trust Foundation Delhi and eGangotri.

आनन्दरामायणमध्यसंस्थं श्रीजन्मकांडं तनयप्रदं च।
पारायणं संश्रवणं तथा वा करोति यो ना स लभेत्सुपुत्रम् ॥१४४॥

इति श्रीमच्छतकोटिरामचरितांतर्गते श्रीमदानन्दरामायणे वाल्मीकीये जन्मकाण्डे
कुशलवादीनां जन्मकथनव्रतबंधविस्तारो नाम नवमः सर्गः ॥ ९ ॥

जन्मकांडे सर्गा आनन्दरामायणे नवैव ज्ञातव्याः। चतुरुत्तराष्टशतश्लोका विष्णुदासरामदासाभ्यामुपदिष्टाः ॥१॥

उपवनदर्शनम् ॥ १ ॥ उपवनक्रीड़ा ॥ २ ॥ सीतात्यागः ॥ ३ ॥ कुशलवोत्पत्तिः ॥ ४ ॥ रामरक्षा ॥ ५ ॥ कमलहरणम् ॥ ६ ॥ पुत्राभ्यां संग्रामः ॥ ७ ॥ सीताग्रहणम् ॥ ८ ॥ बालानामुपनयनम् ॥ ९ ॥

मतलब यह कि जन्मकाण्डका पाठ करनेसे पुत्रार्थी पुत्र, धनार्थी धन तथा किसी भी प्रकारकी कामनावालेकी कामना पूर्ण हो सकती है। इस आनन्दरामायणके मध्यमें स्थित जन्मकाण्ड सन्तानदायक है। जो मनुष्य इसका पारायण करता या सुनता है, उसे सुपुत्रकी प्राप्ति होती है ॥ १४३ ॥ १४४ ॥ इति श्रीशतकोटिरामचरितांतर्गते श्रीमदानन्दरामायणे वाल्मीकीये पं० रामतेजपाण्डेयविरचित'ज्योत्स्ना'भाषाटीकासहिते जन्मकाण्डे नवमः सर्गः ॥ ९ ॥

इस जन्मकाण्डमें कुल नौ सर्ग तथा आठ सौ चार श्लोकों द्वारा श्रीरामदासने विष्णुदासको उपदेश दिया है। ॥ १ ॥ उन नवों सर्गोंमें ये कथायें वर्णित हैं—(१) उपवनदर्शन, (२) उपवनक्रीडा, (३) सीतात्याग, (४) कुशलवकी उत्पत्ति, (५) रामरक्षा, (६) लव द्वारा कमलहरण, (७) पुत्रोंके साथ रामका संग्राम, (८) सीताका पुनर्ग्रहण और (९) बालकोंका उपनयनसंस्कार।

इति श्रीमदानन्दरामायणे जन्मकाण्डं समाप्तम्।

श्रीरामचन्द्रार्पणमस्तु

CC0. In Public Domain Kirtikant Sharma Najafgarh Delhi Collection